इकाई 10 मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान*

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 विषय–प्रवेश

10.2 मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान

10.3 भुगतान–शेष हेतु संतुलन दशाएँ

10.4 मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की प्रभाविता

10.4.1 अस्थायी विनिमय दर

10.4.2 स्थायी विनिमय दर

10.5 नीति विकल्प

10.6 सार संक्षेप

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

10.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि –

- चार मानक समष्टि–अर्थशास्त्रीय प्राचलों के पदों में किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था हेतु संतुलन दशाएँ बता सकें;
- मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान (Mundell-Fleming Model) में अपनाई गईं तीन अवधारणाओं के निहितार्थ संबंधी रूपरेखा बना सकें;
- किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था हेतु IS – LM प्राधार का प्रयोग कर भुगतान–शेष हेतु संतुलन दशाएँ निर्धारित कर सकें;
- अपने लाभ–हानियाँ गिनाते हुए 'स्थायी विनिमय दर' एवं 'अस्थायी विनिमय दर' के बीच अंतर स्पष्ट कर सकें;
- अस्थायी विनिमय दर प्रणाली के अनुसार किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में 'राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति' के प्रभाव पर चर्चा कर सकें;
- स्थायी विनिमय दर प्रणाली के अनुसार किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में 'राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति' के प्रभाव का वर्णन कर सकें;
- किसी अस्थायी एवं स्थायी विनिमय दर प्रणाली के बीच किसी 'नीति विकल्प' की व्यवहार्यता दशा सकें; तथा
- विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के सचित्र तुलनात्मक वर्णन के साथ किसी अर्थव्यवस्था के लिए 'विदेशी मुद्रा भण्डारों' के महत्व को स्पष्ट कर सकें।

10.1 विषय–प्रवेश

वर्तमान अर्थव्यवस्थाओं का सर्वाधिक आकर्षक अभिलक्षण है– वित्त एवं पूँजी बाज़ारों के बीच उच्च कोटि का एकीकरण। नीति–निर्माताओं को घरेलू एवं राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियाँ बनाते समय अंतर्राष्ट्रीय विनिमय दर एवं ब्याज दर को ध्यान में रखना पड़ता है।

* डॉ० आर्ची भाटिया, सह–आचार्य, हिमाचल प्रदेश केन्द्रिय विश्वविद्यालय, धर्मशाला।

चूँकि पूँजी के मुक्त आवागमन पर प्रतिबंध समाप्त किए जा रहे हैं, पूँजी ऐसे देशों की ओर चली जाती है जहाँ उसे सर्वाधिक हानिभय–समंजित लाभ मिलता हो। कोई भी विस्तारकारी मौद्रिक नीति अपने मूल्यों में वृद्धि कर परिसम्पत्तियों का लाभ घटा देती है। यदि यह लाभ अंतर्राष्ट्रीय ब्याज दर से नीचे हो तो अंतर्राष्ट्रीय निवेशक अपना धन निकालकर अन्य ऐसे देशों में निवेश करना चाहेंगे जहाँ उन्हें अपेक्षाकृत अधिक लाभ मिलता हो। पूँजी गतिशीलता, तदनुसार, संसार के परिसम्पत्ति बाज़ारों को एक सूत्र में बाँध चुकी है।

इस इकाई में, हम मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वित्त पर चर्चा करेंगे। आरंभ में हम आपका परिचय अल्पावधि में किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था हेतु प्रतिमान से कराएँगे। तदंतर, हम किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में नीतियों की प्रभाविता के अध्ययनार्थ IS – LM – BP प्राधार का परिचय देंगे। फिर किसी ऐसे देश हेतु मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की प्रभाविता पर चर्चा होगी जो किसी अस्थायी विनिमय दर प्रणाली पर काम करता हो (अर्थात् जहाँ विनिमय दर आर्थिक दशाओं में परिवर्तनों के प्रति स्वतंत्रतापूर्वक समंजित हो जाती हो)। इकाई का समापन हम स्थायी एवं अस्थायी विनिमय दर प्रणालियों के पक्ष एवं विपक्ष में चर्चा के साथ करेंगे।

10.2 मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान

मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान के विधिवत् प्रतिपादन से पूर्व हमें यह ज्ञान होना ही चाहिए कि किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था (small open economy) के लिए 'निवेश' (I) में संतुलन कैसे निर्धारित की जाती है। किसी भी मुक्त अर्थव्यवस्था में, निवेश की ही भाँति निर्यात को भी देश के आय–प्रवाह में अंतःनिक्षेप माना जाता है। इसे घरेलू आय से स्वतंत्र या *स्वायत्त* कहा जाता है। दूसरी ओर, 'आयात' (M) को बचत (S) की ही भाँति, आय–प्रवाह से बाहर निःस्राव माना जाता है। किसी भी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में, इसीलिए, आय–प्रवाह में निवेश के लिए संतुलन दशा निम्नवत् दर्शाई जाती है –

$$I + X = S + M \quad \ldots (10.1)$$

$$X - M = S - I \quad \ldots (10.2)$$

समीकरण (10.2) में निष्पीड़न (x - m), यथा 'निबल निर्यात' निवल विदेशी निवेश के बराबर है। यदि आयात निर्यात से ऊपर चला जाता है तो पद (x – m) ऋणात्मक होगा ताकि घरेलू निवेश निवल विदेशी विनिवेश की राशि (यथा – वह राशि जिसके द्वारा विदेशी जन देश में निवेश कर रहे हैं) तक घरेलू निवेश से ऊपर चला जाए।

'साठ के दशक में रॉबर्ट मण्डल और मार्क्यूस फ्लेमिंग द्वारा विकसित मंडल–फ्लेमिंग मॉडल किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में किसी स्थायी अथवा लचर विनिमय दर प्रणाली के अनुसार पूँजी गतिशीलता के निहितार्थों का अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसे IS – LM प्रतिमान का एक मुक्त–अर्थव्यवस्था रूप कहा जा सकता है। यह एक महत्वपूर्ण एवं अत्यांतिक अवधारणा सामने रखता है अर्थात् अध्ययनाधीन अर्थव्यवस्था पूर्ण पूँजी गतिशीलता वाली कोई लघु मुक्त अर्थव्यवस्था होती है। इसका अर्थ है कि यह अर्थव्यवस्था विश्व के वित्त बाज़ारों में जितना चाहे उधार ले सकती है और, फलतः, इस अर्थव्यवस्था की ब्याज दर विश्व ब्याज दर द्वारा निर्धारित होती है। अधिक विशेष रूप से, इस अवधारणा को निम्नवत् इसके तीन विशिष्ट पहलुओं से निरूपित किया जा सकता है –

1) पूर्ण पूँजी गतिशीलता का अर्थ होता है कि निवेशकगण अपनी पसंद के किसी भी देश में, निम्न लेन–देन लागत के साथ और असीमित परिमाण में, तुरंत, परिसम्पत्तियाँ ख़रीद सकते हैं।

ऐसी पूर्ण पूँजी गतिशीलता के साथ वे बिना किसी प्रतिबंध के उच्चतम लाभ का प्रस्ताव करने वालेदेश में अपनी पूँजी लगा सकते हैं। विश्व में किसी भी देश की ब्याज दर में कोई भी परिवर्तनपूँजी–प्रवाहों को विश्व स्तर पर लाभ दिलाने की ओर ले जा सकता है।

2) लघु मुक्त अर्थव्यवस्था का अर्थ होता है कि इस अर्थव्यवस्था में ब्याज दर *i* विश्व ब्याज दर *i** से निर्धारित होती है, यथा $-i = i^*$. विश्व ब्याज दर को बाह्यजात रूप से निर्धारित माना जाता है क्योंकि विश्व अर्थव्यवस्था विश्व ब्याज दर को प्रभावित किए बिना ही विश्व वित्त बाज़ारों में जितना चाहे उधार ले अथवा दे सकती है। इसका अर्थ है कि न सिर्फ़ किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था की ब्याज दर, *i,* विश्व ब्याज दर ,*i**, से निर्धारित होती है बल्कि उसका भुगतान–शेष (BoP) भी $i = i^*$ पर संतुलन दर्शाता है। तद्नुसार, विश्व बाज़ार दर '*i**' से ऊपर घरेलू ब्याज दर '*i*' में कोई भी वृद्धि घरेलू अर्थव्यवस्था में पूँजी अंतर्वाहों की ओर ले जाएगी। ये अंतर्वाह घरेलू ब्याज दर अंतर्राष्ट्रीय ब्याज दर के बराबर आ जाने तक जारी रहेंगे। इसी प्रकार, *i* से नीचे *i* में कोई भी गिरावट वृहद पूँजी बहिर्वाहों को बढ़ावा देगी। घरेलू अर्थव्यवस्था से ऐसे पूँजी बहिर्वाह *i* के बढ़कर *i* के बराबर आ जाने तक जारी रहेंगे। इसी प्रकार, *i** से नीचे *i* में कोई भी गिरावट वृहद् पूँजी बहिर्वाहों को बढ़ावा देगी। घरेलू अर्थव्यवस्था से ऐसे पूँजी बहिर्वाह *i* के बढ़कर *i** के बराबर आ जाने तक जारी रहेंगे। अतः, $i = i^*$ समीकरण इस अवधारणा को निरूपित करता है कि पूँजी का अंतर्राष्ट्रीय प्रवाह घरेलू ब्याज दर को विश्व ब्याज दर के बराबर लाने के लिए सदैव तत्पर रहता है।

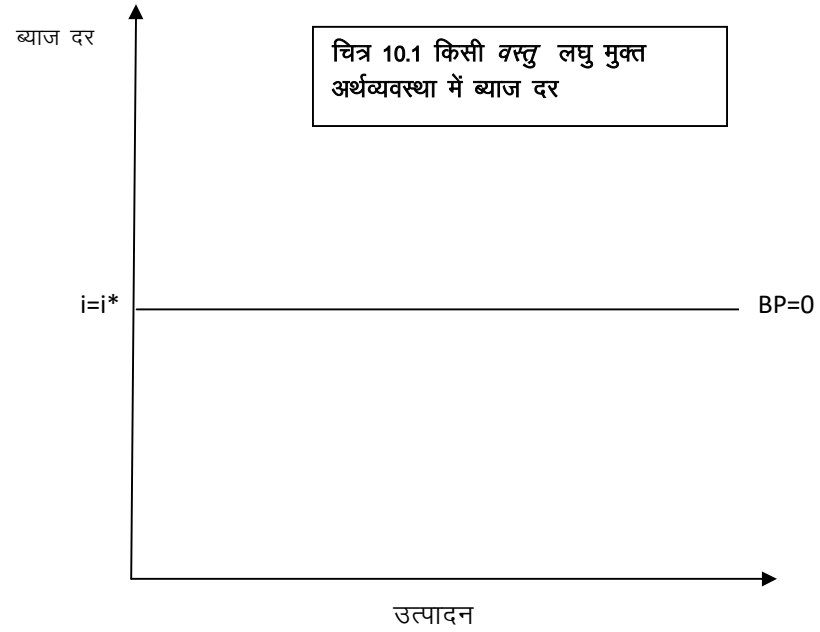

चित्र 10.1 किसी *वस्तु* लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में ब्याज दर

3) यह भी माना जाता है कि मूल्य स्तर देश (P) और विदेश (P*) में अधिक भिन्नता नहीं दर्शाता अर्थात् यह प्रतिमान अल्पावधि घट–बढ़ के विश्लेषण के लिए बनाया गया है। (घरेलू मुद्रा तदनुसार, यदि 'e' नामिक विनिमय दर विदेशी मुद्रा की प्रति इकाई राशि के रूप में परिभाषित) होतो नामिक विनिमय दर में गिरावट (यथा, वृद्धि, विदेशी वस्तुएँ घरेलू वस्तुओं की तुलना में सस्ता करते हुए) वास्तविक विनिमय दर में 'ε' तक एक आनुपातिक ह्रास ला देगी जो कि eP^*/P के बराबर होगा।

10.3 भुगतान–शेष हेतु संतुलन दशाएँ

उक्त दो विनिमय दर प्रणालियों (स्थायी व अस्थायी) के अनुसार आय एवं ब्याज दर को किंचित् परिवर्तित करने में मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति की प्रभाविता को IS – LM वक्रों का प्राधार प्रयोग कर स्पष्ट किया जा सकता है। यहाँ IS वक्र ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (Y) के विभिन्न संयोजन दर्शाता है जो कि माल–बाज़ार में संतुलन में परिणत होते हैं। इस माल बाज़ार दशा को निम्नवत् दर्शाया जाता है–

$$Y = C(Y - T) + I(i) + G + NX(Y, e) \quad \ldots (10.3)$$

जहाँ Y कुल आय है, C वह उपयोग है जो (Y – T) द्वारा दशाई गई प्रयोज्य आय पर निर्भर करता है, T कर है, I वह निवेश है जो विश्व ब्याज दर i^* से विलोमतः संबद्ध है और NX (= X – M) निवल निर्यात है [आयात राष्ट्रीय (Y) का एक सकारात्मक प्रकार्य है जिससे 'निवल निर्यात' Yका एक नकारात्मक प्रकार्य होता है]। यहाँ NX, बहरहाल, मात्रिक विनिमय दर (e) में परिवर्तनों से सकारात्मक संबंध रखता है। मात्रिक विनिमय दर में कोई भी वृद्धि (यथा, अवमूल्यन) निर्यात बढ़ाकर आयात घटा देगी जिससे निवल निर्यात में वृद्धि होगी।

यहाँ IS वक्र नकारात्मक प्रवणता दर्शाता है। ऐसा इसलिए है कि निम्नतर ब्याज दरों पर राष्ट्रीय आय का स्तर भी उच्चतर रहता है जो कि, बदले में, बचत और आयात के उच्चतर स्तर पर ला देता है। इस IS वक्र के प्रत्येक बिंदु पर देश का माल बाज़ार संतुलन में नज़र आता है। निर्यात, राजकीय व्यय और कर राष्ट्रीय आय के स्तर में वृद्धि से प्रभावित नहीं होते क्योंकि इन्हें बाह्यजात माना जाता है। तदनुसार, $\Delta I = \Delta S + \Delta M$ होने पर संतुलन पुनर्स्थापित हो जाती है।

स्मरण करें कि LM वक्र ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (y) के विभिन्न संयोजन दर्शाता है, जहाँ धन की आपूर्ति के बराबर इस प्रकार होती है कि मुद्रा बाज़ार संतुलन में रहता है। निवल निर्यात दर्शाए जाने से LM वक्र नहीं बदलता है और बंद अर्थव्यवस्था के अनुसार इस वक्र की भाँति ही रहता है। इसका अर्थ है कि

$$\frac{M}{P} = L(i, Y) \quad \ldots (10.4)$$

जहाँ M केन्द्रीय बैंक द्वारा बाह्यजात रूप से दशाई गई धनापूर्ति है, P मूल्य स्तर है (जिसे मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान में नियत माना जाता है), और L वास्तविक धन शेष की माँग है (जो कि विश्व ब्याज दर से नकारात्मक रूप से और राष्ट्रीय आय Y से सकारात्मक रूप से संबद्ध होती है)।

यहाँ BP वक्र (यथा, 'भुगतान–शेष' वक्र) ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (Y) के विभिन्न संयोजन दर्शाता है, जहाँ देश का भुगतान–शेष किसी ज्ञात विनिमय दर पर संतुलन में होता हैं। जब कोई 'व्यापार घाटा' (NX<0) निवल पूँजी अंतर्वाह की किसी एक समान राशि से सुमेलित होता है अथवा कोई 'व्यापार अधिशेष' निवल पूँजी बहिर्वाह की किसी एक समान राशि से सुमेलित होता है अथवा कोई शून्य व्यापार–शेष शून्य निवल अंतर्राष्ट्रीय पूँजी–प्रवाह से जुड़ा हो तो भुगतान–शेष साम्यावस्था में होता है। भुगतान–शेष (BP) हेतु समीकरण को, अतएव, निम्नवत् लिखा जा सकता है –

$$X - M(Y) + F(i) = 0 \quad \ldots (10.5)$$

समीकरण (10.5) के अनुसार, व्यापार–शेष जमा निवल पूँजी प्रवाहों F*(i),* का कुल योग, जो कि ब्याज दर से सकारात्मक रूप से जुड़ा होता है, भुगतान–शेष संतुलन हासिल करने के लिए शून्य होना चाहिए। ध्यान देने की बात है कि भुगतान–शेष (BP) वक्र सकारात्मक रूप से प्रवण है। जब आय का स्तर बढ़ता है तो आयात माँग भी बढ़ जाती है जबकि निर्यात माँग के साथ ऐसा नहीं होता। अतएव, भुगतान–शेष संतुलन कायम रखने के लिए पूँजी अंतर्वाह बढ़ना ही चाहिए। ऐसा तभी होता है जब देश की ब्याज दर विश्व ब्याज दर से ऊँची हो। अतः, अंतर्राष्ट्रीय अल्पावधि पूँजी–प्रवाह ब्याज दरों में परिवर्तनों के प्रति जितने अधिक उत्तरकारी होंगे, उतना ही अधिक सपाट भुगतान–शेष (cBP) वक्र होगा।

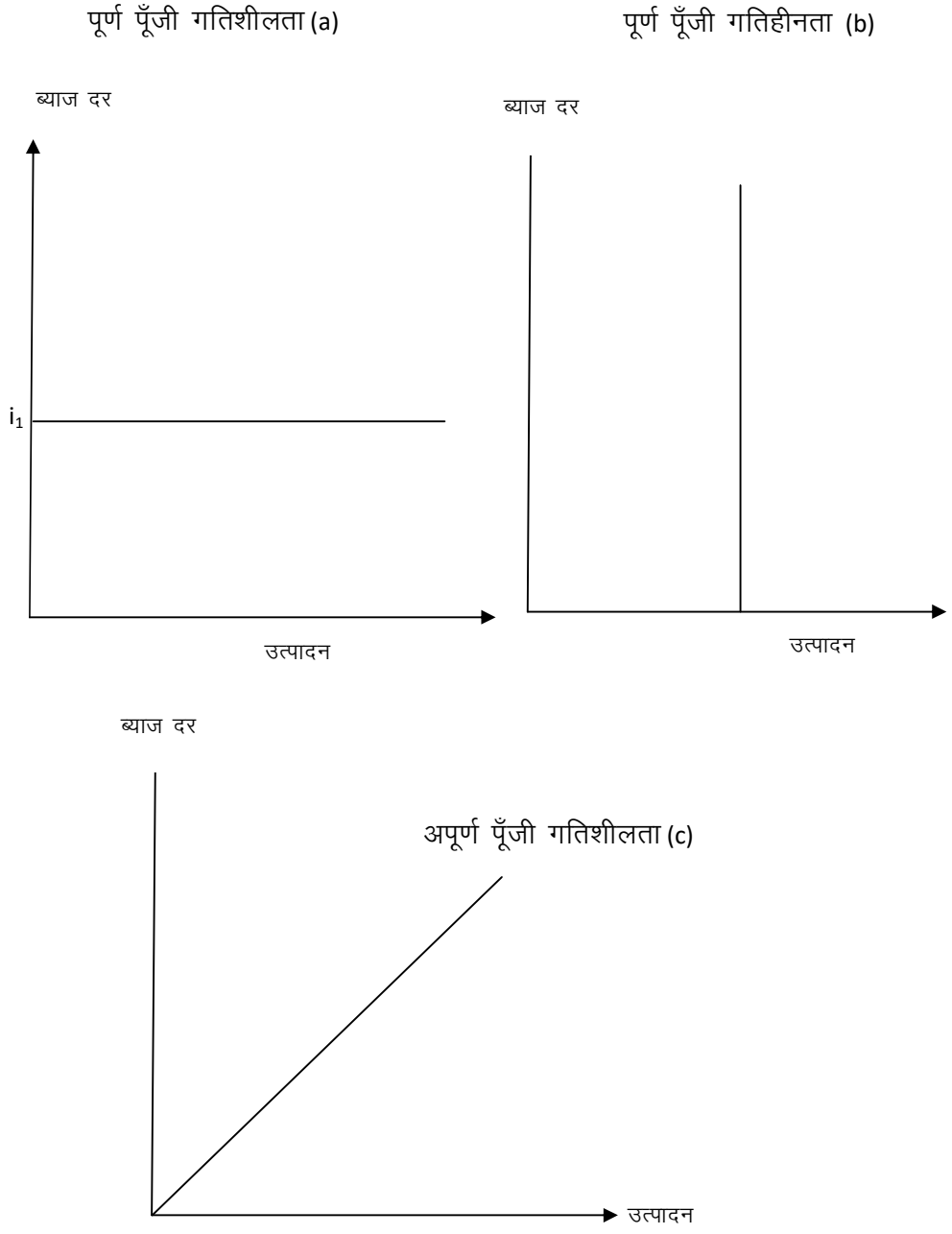

चित्र 10.2: तीन परिदृश्यों में BP वक्र

चित्र 10.2 तीन परिदृश्यों में BP वक्र की आकृति दर्शाता है, यथा, (i) पूर्ण पूँजी गतिशीलता, (ii) पूर्ण पूँजी गतिहीनता तथा (iii) अपूर्ण पूँजी गतिशीलता। अधिक विशिष्ट रूप से, BP

वक्र पूर्ण पूँजी गतिशीलता के अनुसार स्तर $i = i^*$ पर क्षैतिज होता है, पूर्ण पूँजी गतिहीनता की स्थिति में यह लम्बवत् होता है, और अपूर्ण पूँजी गतिशीलता के अनुसार ऊर्ध्वमुखी प्रवण होता है।

व्यवहारतः, बहरहाल, पूँजी न तो पूर्णतः गतिशील होती है और न ही पूर्णतः गतिहीन। साथ ही, यह भी ध्यान देने की बात है कि BP वक्र किसी नियत विनिमय दर की अवधारणा पर ही खींचा जाता है। अतः, देश की मुद्रा का कोई भी अवमूल्यन (अथवा गिरावट) BP वक्र को नीचे खिसका देता है क्योंकि देश का व्यापार–शेष सुधरता है। तदनुसार, किसी भी निम्नतर ब्याज दर और लघुतर पूँजी अंतर्वाहों (अथवा वृहत्तर पूँजी बहिर्वाहों) से अपेक्षित होता है कि वे भुगतान–शेष को संतुलन में रखें। दूसरी ओर, देश की मुद्रा का पुनर्मूल्यांकन अथवा अधिमूल्यन BP वक्र को ऊपर की ओर खिसका देता है।

चित्र 10.3 वह बिंदु दर्शाता है जहाँ देश वस्तु बाज़ार एवं मुद्रा बाज़ार के साथ–साथ भुगतान–शेष में भी संतुलन दर्शा रहा है।

चित्र 10.3: वस्तु बाजार व मुद्रा बाज़ार तथा भुगतान–शेष में संतुलन

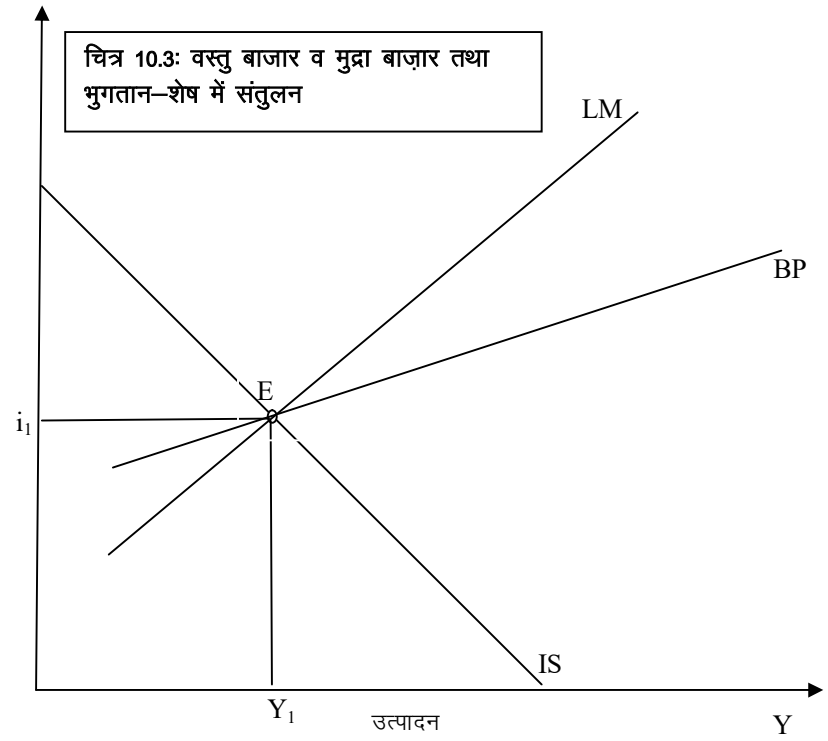

यह बिंदु है – E अर्थात् वह बिंदु जहाँ IS, LM व BP वक्र प्रतिच्छेद करते हैं। आज औद्योगिक देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय पूँजी–प्रवाहों पर सभी अथवा अधिकांश नियंत्रणों के निराकरण के साथ, इन देशों के लिए BP वक्र काफ़ी समतल रहने की संभावना होती है। विकल्पतः, पूर्ण रोज़गार स्तर पर, यह LM वक्र के दाहिने अवस्थित होगा। यदि पूर्ण पूँजी गतिशीलता की अवधारणा (मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान में सामने आई) सही सिद्ध होती हो तो मूल्य सूची BP = 0 से क्षैतिज रेखा होगी। ऐसा तभी होता है जब ब्याज दर अंतराष्ट्रीय स्तर पर अभिभावी ब्याज दरों के बराबर हो, यथा – $i = i^*$ किसी भी अन्य ब्याज दर पर पूँजी–प्रवाह इतने महाकाय होंगे कि भुगतान–शेष साम्यावस्था में नहीं रह सकेगा। ऐसी परिस्थितियों में, विनिमय दर क़ायम रखने के लिए केन्द्रीय बैंक का हस्तक्षेप अपेक्षित होता है।

बोध प्रश्न [अपने उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।**]**

1) मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान की अवधारणाएँ स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) भुगतान–शेष (BP) वक्र क्या दर्शाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) किन परिस्थितियों में BP वक्र नीचे की ओर खिसकता है? क्यों?

.....

.....

.....

.....

.....

10.4 मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की प्रभाविता

मौद्रिक एवं राजकोषीय दोनों ही नीतियाँ पूँजी खाते को प्रभावित करती हैं और इससे ब्याज दर में परिवर्तनों के माध्यम से भुगतान–शेष भी प्रभावित होता है। अपनाई गईं मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के कारण ब्याज दर में उतार–चढ़ाव पूँजी–प्रवाहों, पूँजी खाते और भुगतान–शेष में परिवर्तनों को निर्धारित करते हैं। तदनुसार, इन नीतियों का प्रभाव 'व्यापारांतर शेष' तक सीमित न रहकर पूँजी–प्रवाह में परिवर्तनों के माध्यम से 'पूँजी खाते' तक भी चला जाता है।

10.4.1 अस्थायी विनिमय दर

अस्थायी अथवा सुनम्य या लचर विनिमय दर एक बाज़ार–निर्धारित विनिमय दर होती है। यह माँग एवं आपूर्ति की दशाओं में परिवर्तन के अनुसार घटती–बढ़ती रहती है। मुद्रा अवमूल्यन एवं अधिमूल्यन की प्रक्रिया के माध्यम से, यह संबद्ध देश के भुगतान–शेष में असाम्यावस्था दुरुस्त करने के लिए एक समंजन क्रियातंत्र प्रदान करती है।

(a) राजकोषीय नीति

इस प्रकार के प्रसंग में, मान लीजिए कि सरकार कोई विस्तारकारी राजकोषीय नीति अपनाती है (यथा, सरकारी ख़रीद बढ़ाकर अथवा करों में कटौती करके) इससे नियोजित व्यय में वृद्धि होगी। राजकोषीय विस्तार के साथ, IS वक्र दाहिने IS′ तक खिसकता है (चित्र 10.4)। यहाँ IS वक्र बिंदु E′ पर किसी अपरिवर्तित LM वक्र का प्रतिच्छेद करता है।

यह देश की ब्याज दर बढ़ने हेतु एक ऐसी दशा इंगित करता है जो व्यापक पूँजी अंतर्वाहों एवं देश की मुद्रा के अधिमूल्यन की ओर अग्रसर करती है।

चित्र 10.4: किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था के लिए सुनम्य विनिमय दर के अनुसार राजकोषीय नीति का प्रभाव

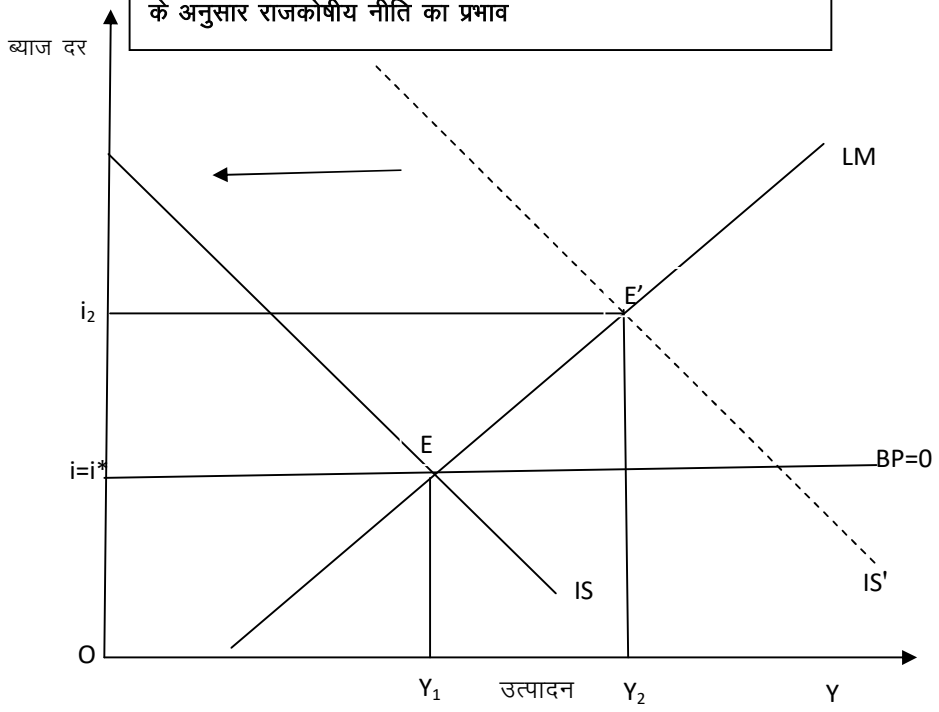

इससे निर्यात हतोत्साहित होता है और आयात प्रोत्साहित होता है, जिससे IS′ वक्र अपनी मूल अवस्था IS पर वापस, बाएँ खिसकता है। निवल निर्यात में गिरावट विस्तारकारी राजकोषीय नीति के प्रभावों का प्रतिकार करती है, जिससे आय–स्तर OY पर अपरिवर्तित ही रहता है। तदनुसार, किसी भी लघु अर्थव्यवस्था में, विस्तारकारी राजकोषीय नीति आय पर शून्य प्रभाव के साथ विनिमय दर के अधिमूल्यन की ओर अग्रसर करेगी। निवल निर्यात में गिरावट आय पर राजकोषीय नीति के विस्तारकारी प्रभाव का प्रतिकार करने के लिए यथातथ्यतः काफ़ी बड़ी होती है। ऐसा इसलिए है कि किसी भी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में, *i* चर *i** पर नियत होता है ताकि आय का एक मात्र ही ऐसा स्तर हो जो इस समीकरण को संतुष्ट कर सके, और यह आय–स्तर राजकोषीय नीति बदलने पर भी बदलता नहीं है।

(b) मौद्रिक नीति

आइए, अब 'मौद्रिक नीति' के प्रभाव पर विचार करते हैं। मान लीजिए कि केन्द्रीय बैंक धनापूर्ति बढ़ा देता है। चूँकि यहाँ मूल्य नियत है, धनापूर्ति में वृद्धि LM वक्र को दाएँ LM′ की ओर खिसका देगी (चित्र 10.5)। इससे ब्याज दर विश्व स्तर से नीचे C पर आ जाती है। किसी भी मुक्त अर्थव्यवस्था में किसी भी विस्तारकारी नीति की प्रसार क्रिया–प्रणाली किसी बंद अर्थव्यवस्था में इस प्रकार क्रिया–प्रणाली से भिन्न होती है (जहाँ धनापूर्ति में वृद्धि ब्याज दर को घटाकर निवेश को बढ़ावा देती है), मुक्त अर्थव्यवस्था में ब्याज दर को विश्व ब्याज दर पर निर्धारित किया जाता है। अतः धनापूर्ति में वृद्धि घरेलू ब्याज दर पर अधोमुखी दवाब डालती है और पूँजी देश से बाहर प्रभाव प्रवाहित होने लगती है। यह पूँजी बहिर्वाह एक ओर घरेलू ब्याज दर में गिरावट बाधित करता है तो दूसरी ओर विदेशी मुद्रा बाज़ार में घरेलू मुद्रा की आपूर्ति बढ़ा देती है।

यह विनिमय दर के अधिमूल्यन की ओर प्रवृत्त करता है जो निवल निर्यात को बढ़ा देता है (घरेलू माल को विदेशी माल की तुलना में सस्ता बना कर)।

निवल निर्यात में वृद्धि IS वक्र को दाएँ IS′ की ओर खिसका देती है और E′ पर एक नई संतुलन जन्म लेती है। अतः, किसी भी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में, विस्तारकारी मौद्रिक नीति विनिमय–दर अवमूल्यन और निवल निर्यात में वृद्धि के माध्यम से आय को बढ़ाती है (न कि ब्याज दर ह्रास और निवेश में वृद्धि के माध्यम से)।

10.4.2 स्थायी विनिमय दर

चित्र 10.5 सुनम्य विनिमय दर प्रणाली के अनुसार मौद्रिक नीति का प्रभाव

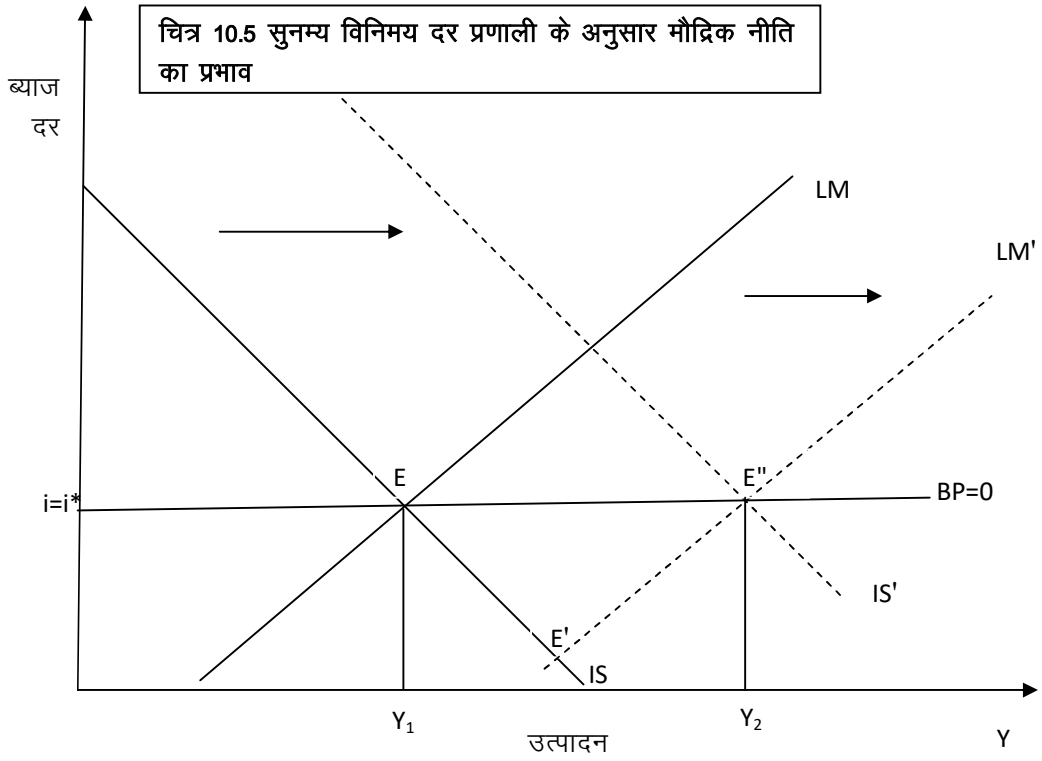

किसी भी स्थायी विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार, केन्द्रीय बैंक किसी पूर्व–निर्धारित मूल्य पर विदेशी मुद्राओं के बदले घरेलू मुद्रा को खरीदने–बेचने के लिए प्रतिबद्ध होता है। यह बैंक किसी ऐसे स्तर पर धनापूर्ति को समंजित कर स्थायी विनिमय दर क़ायम रखता है जो साम्य विनिमय दर और घोषित विनिमय दर के बीच समानता सुनिश्चित कर दे। स्थायी विनिमय–दर प्रणाली वाली किसी भी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था में, घरेलू ब्याज दर में विश्व स्तर से नीचे कोई भी गिरावट पूँजी बहिर्वाह को बढ़ा देगी। इसके परिणामस्वरूप एक अधोमुखी दवाब बनेगा जो विनिमय दर को घटा देगा। इससे घरेलू मुद्रा की अतिरिक्त आपूर्ति होगी। चूँकि केन्द्रीय बैंक स्थायी विनिमय दर क़ायम रखने को वचनबद्ध होता है, वह विदेशी मुद्रा बेचकर और घरेलू मुद्रा ख़रीदकर विदेशी मुद्रा बाज़ार में हस्तक्षेप करता है। यह वास्तविक धन शेष में गिरावट की ओर अग्रसर करता है। तदनुसार, ब्याज दरों में कोई भी ऊर्ध्वमुखी गतिशीलता (विश्व स्तर से ऊपर) पूँजी अंतर्वाहों (और घरेलू वास्तविक धन–शेष के विस्तार) की ओर ले जाती है।

(a) राजकोषीय नीति

मान लीजिए कि सरकार राजकीय क्रय बढ़ाकर अथवा करों में कटौती करके घरेलू ख़र्च को बढ़ा देती है। इस प्रकार की नीति IS वक्र को दाएँ IS′ की ओर खिसका देती है (चित्र 10.6)। बिंदु E′′ पर अपरिवर्तित LM वक्र के साथ IS′ वक्र का प्रतिच्छेदन देश की ब्याज दर विश्व–स्तर से ऊपर चले जाने की प्रवृत्ति इंगित करता है। तथापि, *i = i** पर पूर्ण पूँजी गतिशीलता के कारण विदेश से एक पूँजी अंतर्वाह नज़र आता है जो धनापूर्ति बढ़ा देता है। इससे LM वक्र LM की ओर खिसक जाता है।

चित्र 10.6 स्थायी विनिमय दर के अनुसार राजकोषी नीति

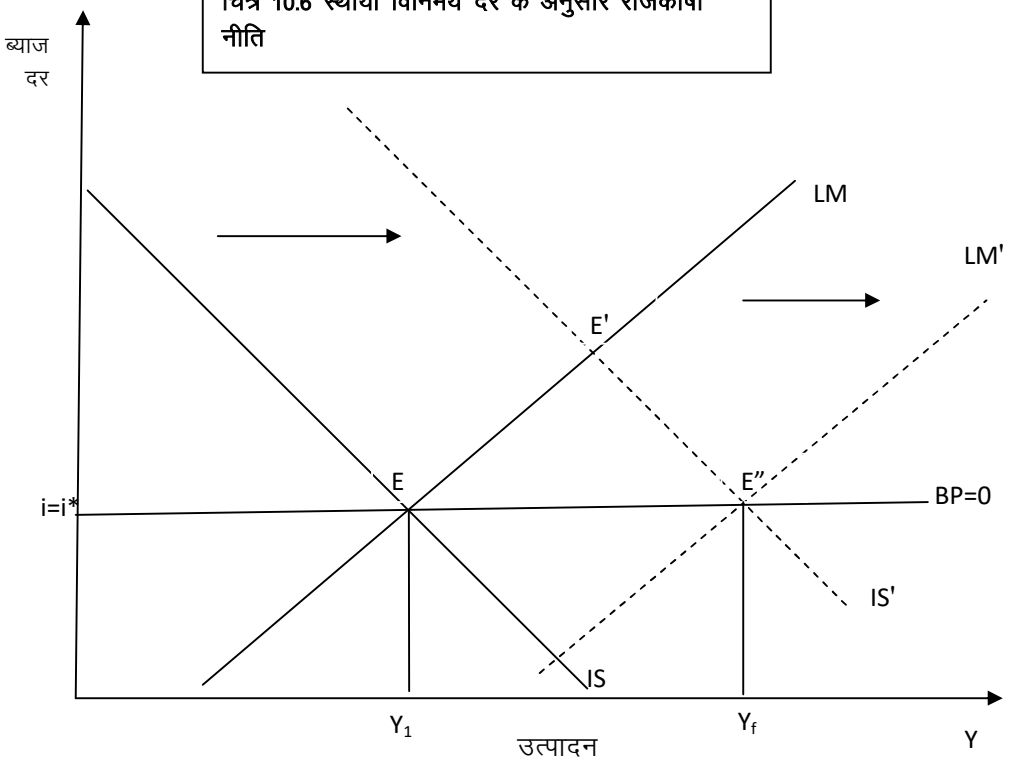

परिणामतः, वक्र IS′ और LM′ क्षैतिज BP वक्र पर बिंदु e′ पर प्रतिच्छेद करते हैं, जहाँ *i = i** और Y = Y+. इस स्थिति में, C वक्र के पूरी तरह C तक खिसक जाने तक द्यनापूर्ति बढ़ने से रोकना असंभव होगा। तभी पूँजी अंतर्वाह समाप्त हो पाएँगे और धनापूर्ति स्थिर होगी। तदनुसार, किसी भी स्थायी विनिमय दर के अनुसार, कोई भी राजकोषीय विस्तार कुल आय को बढ़ा देता है।

(b) मौद्रिक नीति

उपर्युक्त की ही भाँति, कोई भी विस्तारकारी मौद्रिक नीति आरंभतः LM वक्र को खिसकाकर LM तक ले जाएगी (चित्र 10.7)। ब्याज दर गिरकर विश्व ब्याज दर (बिंदु E′) से नीचे चली जाएगी। परिणामित पूँजी बहिर्वाह धनापूर्ति को घटाकर मूल स्तर पर ले आता है जिससे LM′ खिसककर वापस LM पर आ जाता है। इन पूँजी बहिर्वाहों के प्रभाव को निष्क्रिय करने का कोई भी प्रयास शीघ्र ही उसके विदेशी मुद्रा भण्डार को खाली कर देगा और पूँजी बहिर्वाह तब तक जारी रहेगा जब तक कि धनापूर्ति घटकर अपनी मूल अवस्था

में नहीं आ जाती, यथा, LM पर। तदनुसार, स्थायी विनिमय दर के साथ, अंतर्राष्ट्रीय पूँजी–प्रवाह उच्च रूप से लोचदार होने पर मौद्रिक नीति निष्प्रभावी रहेगी। इस प्रकार, किसी स्थायी विनिमय दर को रखकर केन्द्रीय बैंक धनापूर्ति पर अपना नियंत्रण खो देता है।

निष्कर्षतः, इसलिए, मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान दर्शाता है कि मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति की

चित्र 10.7: स्थायी विनिमय दर के अनुसार मौद्रिक नीति का प्रभाव

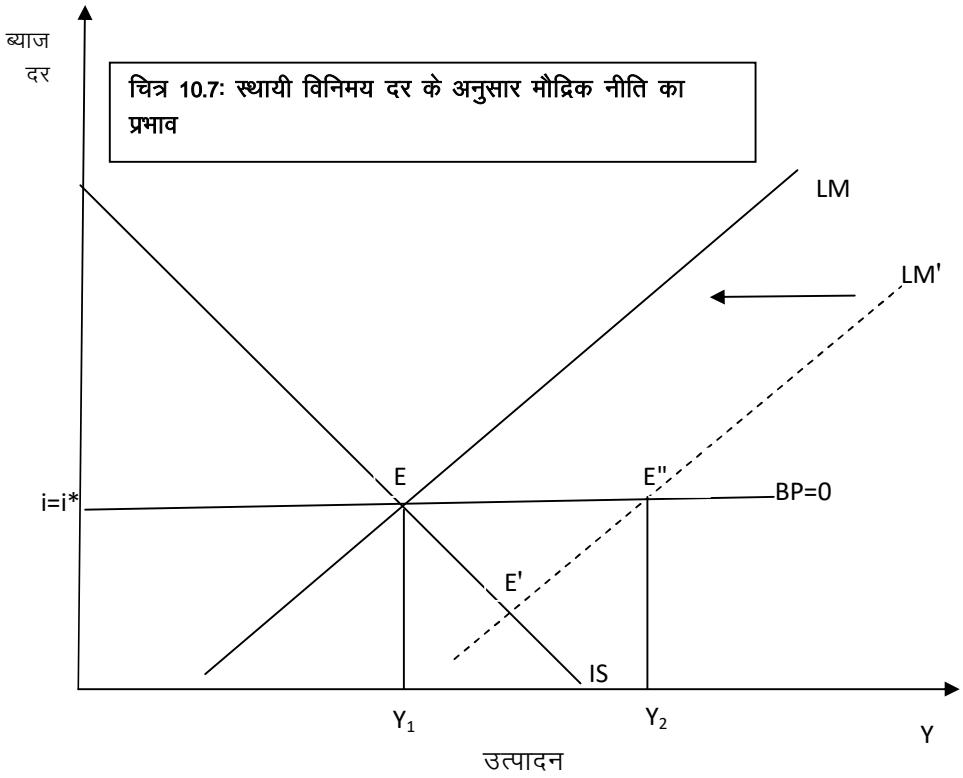

क्षमता (कुल आय प्रभावित करने की) विनिमय–दर क्रियातंत्र पर निर्भर करती है। अस्थायी विनिमय दरों के अनुसार केवल मौद्रिक नीति ही आय को प्रभावित कर सकती है जबकि स्थायी विनिमय दर के अनुसार, केवल राजकोषीय नीति ही ऐसा कर सकती है। मौद्रिक नीति की सामान्य अंतःशक्ति कहीं लुप्त हो जाती है क्योंकि धनापूर्ति विनिमय दर को घोषित स्तर पर ही क़ायम रखने के प्रति समर्पित रहती है। इसके अलावा, यद्यपि ***IS –LM –BP*** प्रतिमान विगत चार दशकों से मुक्त अर्थव्यवस्थाओं की आर्थिक नीति को सफलतापूर्वक दिशा–निर्देशित करता आया है, इस प्रतिमान की एक गंभीर आलोचना सामने आयी है, यथा, यह मूलधन और धन–प्रवाहों को मिला देता है। विशेष रूप से, ***LM*** वक्र धन के *भण्डार* पर आधारित होता है, जबकि ***BP*** वक्र पूँजी के *प्रवाह* पर। इस प्रतिमान की यह अवधारणा कि घरेलू ब्याज दर में कोई भी उछाल विदेशों से निरंतर पूँजी अंतर्वाह की ओर प्रवृत्त करेगा (देश के भुगतान–शेष घाटे की भरपाई करने के लिए), दोषयुक्त है क्योंकि घरेलू ब्याज दर में वृद्धि के पश्चात् निवेशकों द्वारा अपनी–अपनी निवेश–सूचियाँ पुनर्समंजित कर लेने के बाद अंतर्वाह रुक भी सकता है! तलिका 10.1 में

'आय, विनिमय दर और व्यापारांतर' पर इस प्रतिमान के अल्पावधि प्रभाव संक्षेपित किए गए हैं।

तालिका 10.1: आय, विनिमय दर और व्यापारांतर पर नीतियों के अल्पावधि प्रभाव

नीति	स्थायी विनिमय दर			अस्थायी विनिमय दर		
	आय (y)	विनिमय दर (e)	निवल निर्यात (NX)	आय (y)	विनिमय दर (e)	निवल निर्यात (NX)
राजकोषीय विस्तार	शून्य प्रभाव	वृद्धि	ह्रास	वृद्धि	शून्य प्रभाव	शून्य प्रभाव
मौखिक विस्तार	वृद्धि	ह्रास	वृद्धि	शून्य प्रभाव	शून्य प्रभाव	शून्य प्रभाव

10.5 नीति विकल्प

एक अति महत्वपूर्ण प्रश्न है – कौन–सी विनिमय दर प्रणाली (अस्थायी दर वाली अथवा स्थायी दर वाली) श्रेयस्कर होती है? ऐतिहासिक रूप से, अधिकांश देशों ने अपनी–अपनी मुद्रा का अमेरिकी डॉलर अथवा पाउंड स्टर्लिंग से अथवा विदेशी मुद्राओं के किसी घालमेल से गठबंधन कर लिया। शनैः–शनैः, इन देशों ने सुनम्य बाज़ार–निर्धारित विनिमय दरों की ओर रुख कर लिया। जैसा कि हमने ऊपर चर्चा की, स्थायी विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार, केन्द्रीय बैंक कोई स्वतंत्र मौद्रिक नीति नहीं अपना सकता; इसकी बजाय वह विनिमय दर को अपने घोषित स्तर पर ही बनाए रखने के एकल लक्ष्य के प्रति वचनबद्ध रहता है। इसके अलावा, अन्य महत्वपूर्ण चर (जैसे – मुद्रास्फीति, रोज़गार) भी होते हैं जिन्हें मौद्रिक नीति द्वारा स्थायी विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार प्रभावित नहीं किया जा सकता। ऐसा इसलिए है कि केन्द्रीय बैंक के समक्ष 'असंभव त्रिक' हासिल करने की समस्या होती है; यथा – वह स्थायी विनिमय दर, वित्तीय उदारता और मौद्रिक स्वतंत्रता संबंधी तीन सहज गुणों में कोई दो ही चुन सकता है, तीनों नहीं। यदि केन्द्रीय बैंक स्थायी विनिमय दर (माना, विनिमय दर अमेरिकी डॉलर से जुड़ी है) और पूँजी गतिशीलता चुनता है तो उसे अपनी ब्याज दर सघन रूप से अमेरिका की ब्याज दर के अनुरूप रखनी पड़ेगी। यदि देश की ब्याज दर अमेरिका की ब्याज दर से कम हुई तो व्यापक पूँजी बहिर्वाह देखने में आएगा। परंतु ब्याज समानता का अर्थ है कि देश स्वयं को अमेरिका से स्वतंत्र मानकर कोई अपनी मौद्रिक नीति नहीं चला सकता। मौद्रिक स्वायत्तता केवल पूँजीगत नियंत्रण लागू करके किसी स्थायी दर के अंतर्गत पुनर्प्राप्त नहीं की जा सकती। यदि पूँजी–प्रवाहों पर प्रतिबंध लगाया जाता है तो देश की ब्याज दर अमेरिका में जारी ब्याज दर से वियुग्मित हो जाएगी।

स्थायी विनिमय दर के पक्षधर कहते हैं कि विनिमय–दर अनिश्चितता अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को दुष्कर बना देती है। 'सत्तर के दशकारंभ में स्थायी विनिमय दरों की ब्रैटन वुड्स व्यवस्था को दुनिया द्वारा नकार दिए जाने के बाद, वास्तविक और मात्रिक दोनों ही विनिमय दरें काफ़ी अधिक अस्थायी हो गईं। स्थायी विनिमय दर के प्रति वचनबद्धता किसी भी देश के मुद्रा प्राधिकरण को अत्यधिक विनिमय–दर असारता से बचाकर अनुशासित कर देती है। इस प्रकार की नीति, बहरहाल, आय एवं रोज़गार में वृहत्तर असारता की ओर अग्रसर करती है। नव अस्थायी विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार वर्धित विनिमय–दर असारता के बावजूद, विश्व व्यापार की मात्रा निरंतर बढ़ती ही रही है। किसी अस्थायी विनिमय दर के पक्ष में मुख्य तर्क यह होता है कि यह किसी भी देश को रोज़गार अथवा

कीमतें स्थिर करने जैसे अन्य लक्ष्यों की ख़ातिर अपनी मौद्रिक नीति अपना लेनी की अनुमति देती है। इस प्रकार, सुनम्य विनिमय दर और पूर्ण पूँजी गतिशीलता के अनुसार, कोई भी विस्तारकारी मौद्रिक नीति विनिमय–दर अवमूल्यन की ओर प्रवृत्त करती है और इससे निवल निर्यात व आय में परिणामी वृद्धि दिखाई पड़ती है जब घरेलू अर्थव्यवस्था में आय बढ़ती हो तो वह विदेशों में घटती है। निवल निर्यात में कोई भी अवमूल्यन–प्रेरित परिवर्तन शेष जगत् के विरुद्ध घरेलू रोज़गार का सृजन करता है। ऐसा इस कारण होता है कि किसी भी मौद्रिक विस्तार एवं परिणामी अवमूल्यन को 'परधन हरण कुचाल' की संज्ञा दी जाती है। किसी देश के समक्ष मंदी की स्थिति होने की अवस्था में, मौद्रिक विस्तार–प्रेरित अवमूल्यन विश्व माँग को अपनी दिशा में मोड़ लेगा और देश को पूर्ण रोज़गार की तरफ ले जाएगा।

अतएव, स्थायी एवं अस्थायी विनिमय दर के बीच विकल्प चुनना आसान नहीं होता। इसीलिए ऐसी विनिमय दरें विरले ही दिखाई पड़ती हैं जो पूर्णतः स्थायी अथवा पूर्णतः अस्थायी हों। स्थायी विनिमय दरों की व्यवस्था में, यदि विनिमय दर अन्य लक्ष्यों को हासिल करने में बेहद अड़चन पैदा करने वाली हो तो देश अपनी मुद्रा का मान घटा या बढ़ा सकते हैं। दूसरी ओर, अस्थायी विनिमय दरों की व्यवस्था में, यह तय करते समय कि अपनी धनापूर्ति को बढ़ाएँ या घटाएँ, देश विनिमय दर के लिए औपचारिक अथवा अनौपचारिक लक्ष्य सामने रख सकते हैं।

दृष्टांत : भारतीय परिदृश्य

भारत ने अपनी मुद्रा वर्ष 1971 से 1991 तक अमेरिकी डॉलर के प्रति और वर्ष 1971 से 1975 तक पाउंड स्टर्लिंग के प्रति स्थिर रखी। वर्ष 1971 में ब्रिटन वुड्स व्यवस्था भंग हो जाने के बाद, पाउंड का मूल्य गिर गया और भारत में रुपए की ख़स्ता हालत देखी गई। अवमूल्यन के दवाब से बचने के लिए, भारत ने अपनी मुद्रा मुद्राओं के एक समूह के प्रति स्थिर कर दी। वर्ष 1971–91 की अवधि में, विनिमय दर भारत के प्रमुख व्यापार सहभागियों के एक मुद्रा–समूह के भारित औसत के +1/5 प्रतिशत की एक नामिक परिधि में रहकर भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा आधिकारिक रूप से निर्धारित की गई। इस विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार किसी भुगतान–शेष घाटे की स्थिति में [जहाँ RBI रुपए की विनिमय दर में कोई भी वृद्धि (अवमूल्यन) रोकने के लिए डॉलर बेच रहा है (रुपया ख़रीद रहा है)], संतुलन की तुलना में रुपए का मूल्य कम होता है। किसी अल्पमूल्यित मुद्रा को समर्थन देने की प्रक्रिया अनिश्चित काल के लिए जारी नहीं रह सकती क्योंकि अंततोगत्वा उक्त बैंक (RBI) का विदेशी मुद्रा भंडार समाप्त हो जाएगा। इस बिंदु तक पहुँचने से पूर्व, इस बैंक (RBI) को घाटा दूर करने के लिए नीतिगत क़दम उठाने होंगे। इससे घरेलू समंजन की आवश्यकता महसूस होती है, जैसा कि समीकरण (10.6) द्वारा इंगित किया गया है –

$$NX = X - M = Y - AE = Y - (C + G + I) \quad \ldots (10.6)$$

जहाँ NX 'निवल निर्यात' दर्शाता है, यथा – व्यापारांतर और AE का अर्थ है – 'कुल व्यय'। व्यापारांतर NX बढ़ाने के लिए तीन विकल्प हैं – (i) Y स्थिर रखते हुए AE घटाना; (ii) AE स्थिर रखते हुए Y बढ़ाना; और (iii) e के स्थिर मूल्य को घटाकर e* के नज़दीक लाते हुए अवमूल्यन होने देना। दूसरे विकल्प में पहले से अधिक श्रम और वृहत्तर कार्यावधि से जुड़े कारकों की उत्पादकता में वृद्धि की अपेक्षा होगी, जो कि अल्पावधि में न तो रुचिकर होगा और न ही सरलता से लभ्य। इससे AE में कटौती होगी और अन्य विकल्पों की भाँति

अवमूल्यन भी। कुल व्यय में कटौती दुःखदायी होगी क्योंकि इससे अर्थव्यवस्था में बेरोज़गारी बढ़ेगी और आय जीवन–स्तर में गिरावट आएगी (क्योंकि उपभोग घट जाएगा)। अवमूल्यन मुद्रास्फीतिकारी दवाब पैदा करने वाला होता है क्योंकि आयात महँगा हो जाता है। अतः, सरकारें प्रायः ह्रासमान निचयों की सूरत में समंजन प्रक्रिया शुरू करने के प्रति अनिच्छुक होती हैं। अक्सर ही, इससे भुगतान–शेष संकट पैदा होने लगता है।

'नब्बे के दशकारंभ में, भारत में व्याप्त आर्थिक संकट मुख्यतः 'अस्सी के दशक भर बने रहे वृहद एवं वर्धमान राजकोषीय असंतुलनों की वजह से पैदा हुआ। इन बड़े राजकोषीय घाटों ने, कालांतर में, एक बाह्य भुगतान संकट में उभरकर आए व्यापार घाटे पर अधिप्लव प्रभाव डाला। 'अस्सी के दशकांत तक आते–आते भारत गंभीर आर्थिक संकट में घिर चुका था। जब निचय परिसम्पत्तियों की आधृति (केन्द्रीय बैंक के पास) कम हो जाती है तो विदेशी ऋणदाताओं का सरकार में विश्वास डिग जाता है। परिणामतः, वे या तो ऋण घटा देते हैं या फिर ऊँची ब्याज दरें माँगने लगते हैं। इससे भुगतान–शेष घाटा और बदहाल हो गया। और बुरी बात, रुपए पर अनिश्चित आघात हो सकता था। विदेशी निचयों का घटता भंडार इसीलिए किसी अवमूल्यित रुपए के रक्षार्थ उक्त बैंक की क्षमता को कमज़ोर करता है। इससे निकट भविष्य में रुपए के अवमूल्यन की प्रत्याशा को बल मिलता है। परिणामतः, लोग रुपए बेचने और डॉलर ख़रीदने को दौड़ते हैं। किसी संभावित रुपया–अवमूल्यन पश्चात् जब डॉलर का दाम बढ़ जाता है तो ऐसे अर्जित डॉलरों को बेचकर आप लाभ कमा सकते हैं। दूसरे शब्दों में, आसन्न अवमूल्यन लोगों को रुपया त्याग देने की ओर प्रवृत्त करता है जिससे उक्त बैंक के लिए रुपए का परित्राण मुश्किल हो जाता है। ऐसा इसलिए है कि उसे विरल डॉलर उन्हें बेच देने पड़ते हैं जो अपना धन रुपए से डॉलर में बदल डालना चाहते हैं। इसके साथ ही, डॉलरों का भण्डार तेज़ी से खाली होने लगता है, जिससे अंततोगत्वा रुपए का अवमूल्यन अपरिहार्य हो जाता है। तदनुसार, प्रत्याशित अवमूल्यन वास्तविक अवमूल्यन में बदल जाता है।

तलिका 10.2: विदेशी विनिमय निचय की तुलनात्मक रूपरेखा (2018)

श्रेणी	देश	अरब अमेरिकी डॉलर में
1	चीन	3210.0
2	जापान	1259.3
3	स्विट्ज़रलैंड	804.3
4	साउदी अरब	501.3
5	रूस	460.6
6	ताइवान	459.9
7	हाँग काँग	424.8
8	भारत	403.7
9	दक्षिण कोरिया	402.4
10	ब्राज़ील	379.4

वर्ष 1991 के मध्य में, भारत की विनिमय दर कठोर समंजन के अधीन रही। विदेशी निचय लगभग समाप्त थे; ऐसे में भारत सरकार ने तीव्र अवमूल्यन की अनुमति दे दी, जो कि

प्रमुख मुद्राओं के सम्मुख तीन दिनों (एक जुलाई से 3 जुलाई 1991) के भीतर दो चरणों में क्रियान्वित हुआ। केन्द्रीय बैंक (RBI) ने पहले भारतीय रुपए का 9 प्रतिशत तक अवमूल्यन किया और फिर 3 जुलाई तक आते–आते उसे बढ़ाकर 11 प्रतिशत कर दिया।

वर्ष 1991 के भुगतान–शेष संकट के प्रत्युत्तर में, भारत का पारगमन एक बाज़ार–आधारित विनिमय दर की ओर देखा गया। परिणामतः, वर्ष 1993 से विनिमय दर के उतार–चढ़ाव बाज़ार से ही निर्धारित होने लगे। हाल के वर्षों में, भारत के डॉलर निचय ऊँचे स्तर पर पहुँच चुके हैं। यह उक्त बैंक (RBI) की विनिमय–दर नीति का एक प्रत्यक्ष प्रभाव ही है। पहले से अधिक लाभ का संभावना से आकर्षित हो, विदेशी बचतकर्ता बड़े पैमाने पर भारतीय शेयर बाज़ार में शेयर ख़रीद रहे हैं। पूँजी का यह अंतर्वाह डॉलरों की आपूर्ति में वृद्धि कर रहा है।

चीन अब तक का सबसे बड़ा विदेशी–मुद्रा निचय धारक रहा है, जहाँ उसके पास दूसरे सबसे बड़े निचय धारक अर्थात् जापान के मुक़ाबले ढाई गुना अधिक विदेशी मुद्रा भण्डार है। यदि चीन और हाँगकाँग के निचय जोड़ दिए जाएँ तो कुलयोग 3.6 लाख करोड़ डॉलर आता है। दरअसल, एशियाई देशों का विदेशी मुद्रा निचयों पर प्रभुत्व है, जहाँ शीर्ष 10 में से छह देश स्थित हैं जबकि भारत आठवें स्थान पर है। निचयों का एक बड़ा भण्डार संचित हो जाने को एहतियाती आधार पर सही ठहराया जाता है क्योंकि यह 'विदेश व्यापार एवं धन के प्रवाह में संभावित व्यवधानों, से रक्षार्थ एक तोषक की भूमिका निभाता है जो कि अन्यथा अर्थव्यवस्था को भारी नुक़सान पहुँचा सकते हैं। इस पूर्वावधानी उद्देश्य को किसी विनियंत्रित वित्तीय परिवेश में अस्थिरता के अवबोधन से बल मिलता है।

बोध प्रश्न 2 [अपने उत्तर दिए गए स्थान में लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।]

1) दशाएँ कि सुनम्य विनिमय दर वाली किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में विस्तारकारी राजकोषीय नीति किस प्रकार आय, ब्याज दर और विनिमय दर को प्रभावित करती है।

.....

.....

.....

.....

.....

2) 'मौद्रिक नीति' स्थिर विनिमय दर वाली किसी खुली अर्थव्यवस्था को किस प्रकार प्रभावित करती है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) IS – LM – BP प्रतिमान की किन आधारों पर आलोचना की जाती है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) किसी स्थायी विनिमय दर प्रणाली के लाभ और हानियाँ बताएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

5) अस्थायी विनिमय दर प्रणाली के पक्ष में प्रमुख तर्क क्या दिया जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

6) अस्थायी एवं स्थायी विनिमय दर प्रणालियों के अपने–अपने लाभ ज्ञात होने पर क्या आप कोई आदर्श नीति विकल्प सुझाना चाहेंगे?

.....

.....

.....

.....

.....

10.6 सार संक्षेप

इस इकाई में हमने मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान के लिए तैयार की गई अवधारणाओं की एक श्रृंखला के अनुसार किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था की कार्यप्रणाली पर चर्चा की। विशेष रूप से, आय और विनिमय दर को प्रभावित करने में मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की प्रकार्यात्मकता पर प्रकाश डाला गया। अस्थायी और स्थायी विनिमय–दर प्रणालियों के परिवेश में अर्थव्यवस्था के क्रियाकलाप को भी स्पष्ट किया गया। मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान दर्शाता है कि कुल आय को प्रभावित करने के लिए मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति की शक्ति विनिमय–दर प्रणाली पर ही निर्भर करती है। अस्थायी विनिमय दरों के अनुसार, मौद्रिक नीति को उत्पादन स्तर प्रभावित करने वाला माना जाता है जबकि किसी नियत विनिमय–दर व्यवस्था के अनुसार, राजकोषीय नीति ही उत्पादन स्तर को प्रभावित करने वाली मानी जाती है। इन दोनों ही विनिमय–दर प्रणालियों का विश्लेषण दर्शाता है कि किसी भी देश के लिए 'मुक्त पूँजी–प्रवाह, एक स्थायी विनिमय दर और एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति' एक साथ अपनाना असंभव होता है (अतः इन्हें 'असंभव त्रिकं' की संज्ञा दी गई।) वैसे अस्थायी एवं स्थायी दोनों विनिमय दरों के कुछ लाभ भी हैं। जहाँ अस्थायी विनिमय दरें मौद्रिक नीति–निर्माताओं को मुद्रास्फीति व बेराज़गारी से निज़ात जैसे अन्य प्रयोजनों को पूरा करने के लिए खुली छूट देती हैं वहीं स्थायी विनिमय–दर प्रणाली अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में अनिश्चितता दूर करती है। अतः, स्थायी और अस्थायी विनिमय–दर

प्रणाली के बीच फैसला करते समय, किसी भी अर्थव्यवस्था को विनिमय–दर असारता, मौद्रिक स्वायत्तता हानि तथा पूँजी गतिशीलता पर प्रतिबंधो के बीच विवेकपूर्ण निर्णय लेना होता है।

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

(1) पूर्ण पूँजी गतिशीलता, लघु मुक्त अर्थव्यवस्था, देश–विदेश में स्थायी मूल्य स्तर।

(2) यह ब्याज दर और आय के उन विभिन्न संयोजनों को दर्शाता है जहाँ किसी ज्ञात विनिमय दर पर देश का भुगतान–शेष संतुलन में होता है।

(3) जब देश की मुद्रा का अवमूल्यन दिखाई पड़ता है तो BP वक्र अधोमुखी प्रवण होता है। अतः,निम्नतर ब्याज दर और लघुतर पूँजी अंतर्वाह (अथवा वृहत्तर पूँजी बहिर्वाह) भुगतान–शेष को संतुलन में रख सकते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) यह पूँजी अंतर्वाह, घरेलू मुद्रा के अधिमूल्यन तथा निवल निर्यात में गिरावट को जन्म देता है। इससेआय अपरिवर्तित रहती है और ब्याज i^* पर स्थिर रहता है।

2) मौद्रिक नीति अंतर्राष्ट्रीय पूँजी–प्रवाहों में अत्यधिक सुनम्यता रहने तक निष्प्रभावी रहती है। कोई स्थिर विनिमय दर क़ायम रखकर केन्द्रीय बैंक धनापूर्ति पर नियंत्रण खो देता है।

3) इस आधार पर कि यह भंडार एवं प्रवाहों को मिला देता है, यथा, जहाँ LM वक्र धन के भंडार पर आधारित होता है, वहीं BOP वक्र पूँजी–प्रवाह पर आधारित होता है।

4) यह देश की मौद्रिक व्यवस्था को अनुशासित करता है और अत्यधिक विनिमय–दर असारता सेबचाता है। परंतु आय एवं रोज़गार कहीं अधिक अस्थायी होंगे।

5) यह किसी भी देश को रोज़गार एवं मूल्य स्थिर करने हेतु अपनी मौद्रिक नीति पर ध्यान देने देता है।

6) नहीं। इन दोनों के ही अपने–अपने लाभ–हानियाँ हैं। इस परिप्रेक्ष्य में, हम विरले ही ऐसी विनिमय दरें पाते हैं जो पूर्णतः स्थायी अथवा पूर्णतः अस्थायी हों।

इकाई 11 डॉर्नबुश का अतिलंघन प्रतिमान*

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 विषय–प्रवेश

11.2 डॉर्नबुश प्रतिमान

11.2.1 ब्याज अन्तरों व कीमतों का प्रभाव

11.2.2 लचीली विनिमय दर, मुद्रा और कीमतें

11.2.3 मौद्रिक विस्तार के प्रभाव

11.3 विनिमय दर अतिलंघन

11.4 सार संक्षेप

11.5 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

11.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि ––

- 'अतिलंघन' शब्द को स्पष्ट कर सकें;
- उन परिस्थितियों पर चर्चा कर सकें जिनमें रहकर 'डॉर्नबुश का अतिलंघन प्रतिमान' काम करता है;
- डॉर्नबुश के प्रतिमान की शर्तों में किसी अर्थव्यवस्था पर 'ब्याज दर अन्तरों एवं क़ीमतों' का प्रभाव सोदाहरण समझा सकें;
- लचीली 'विनिमय दर, मुद्रा एवं क़ीमतें' होने की स्थिति में डॉर्नबुश प्रतिमान की शर्तों के तहत 'समंजन प्रक्रिया' की क्रियाविधि के विभिन्न चरण बता सकें;
- डॉर्नबुश प्रतिमान की शर्तों के साथ 'मौद्रिक विस्तार' के अल्पावधि एवं दीर्घावधि प्रभावों पर कोई टिप्पणी लिख सकें;
- 'विनिमय दर अतिलंघन' की संकल्पना स्पष्ट कर सकें; तथा
- यह सोदाहरण समझा सकें कि डॉर्नबुश के अतिलंघन प्रतिमान के तहत बाजार में कोई 'नयी संतुलन विनिमय दर' किस प्रकार लागू की जाती है।

11.1 विषय–प्रवेश

अतिलंघन अथवा अंग्रेजी में 'ओवरशूटिंग' शब्द समष्टि अर्थशास्त्र और वित्त व्यवस्था में प्रायः प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग किसी अर्थव्यवस्था के क्षतिग्रस्त होने के बाद उसकी 'विनिमय दर' का व्यवहार दर्शाने के लिए अकसर ही किया जाता है, यथा – यथेष्ट महत्व की किसी ऐसी अप्रत्याशित घटना का वर्णन करने के लिए जो औसत आय, सामान्य कीमत स्तर और औसत रोजगार मात्रा को प्रभावित करती हो। अतिलंघन इस तथ्य पर प्रकाश डालता है कि किसी क्षति या आघात के प्रत्युत्तर में अपना नया दीर्घावधि मान प्राप्त करने से पूर्व, विनिमय दर आरंभतः उस नये स्तर से परे जा सकती है अथवा उसे लाँघ सकती है जिस पर वह अंततोगत्वा वापस जाएगी। अतिलंघन की दृश्यघटना अंतर्राष्ट्रीय समष्टि अर्थशास्त्र के ऐसे अनेक आधुनिक सिद्धांतों में आमतौर पर देखी जाती

* डॉ० आर्ची भाटिया, सह–आचार्य, हिमाचल प्रदेश केन्द्रिय विश्वविद्यालय, धर्मशाला।

है जो अल्पावधि में अनुदार कीमतें तय कर लेते हैं। तदनुसार, यह किसी समष्टि–अर्थशास्त्रीय पूर्वानुमान के साथ–साथ मौद्रिक–नीति परिवर्तनों के प्रति अर्थव्यवस्था के संभावित प्रत्युत्तरों के विश्लेषण का भी एक आवश्यक घटक होती है। तथापि, विनिमय दर के व्यवहार में सभी प्रतिमान अतिलंघन का पूर्वानुमान करके नहीं चलते।

अतिलंघन की संकल्पना एक महत्वपूर्ण आनुभविक वास्तविकता स्पष्ट करने में मदद करने में मदद करती है, यथा, विनिमय दरें कीमत स्तरों अथवा ब्याज दरों की अपेक्षा कहीं अधिक अस्थिर होती हैं। वस्तुतः, जहाँ कीमतें अपने नये दीर्घावधि स्तरों के प्रति शनैः–शनैः एवं एक दिष्ट रूप से समंजित होती हैं, वहीं विनिमय दरें 'उछाल दर्शाती हैं'। अनेक प्रकार के आर्थिक संक्षोओं से भरे इस संसार में, यह संकल्पना विनिमय दरों की उच्च अस्थिरता और कीमतों की काफी कम अस्थिरता की ओर इंगित करती है।

सिद्धान्ततः, अतिलंघन किसी ऐसे आर्थिक प्रतिमान में दृष्टिगत होता है जो यह मानकर चलता है कि – (i) विनिमय दरें लचीली हैं; (ii) अनावृत्त ब्याज सममूल्यता लागू है (यथा, अमेरिका और यूरो क्षेत्र में ब्याज दरों के बीच अंतर, उदाहरणार्थ, अमेरिकी डॉलर मूल्यक्षय की प्रत्याशित दर के बराबर है); (iii) मुद्रा की माँग ब्याज दर व उत्पादन पर निर्भर करती हैय तथा (iv) कीमतें अल्पावधि में तय की जाती हैं परंतु वे दीर्घावधि में मौद्रिक संक्षोओं का प्रतिकार करने के लिए पूर्णतः समंजित हो जाती हैं। इस प्रकार, दीर्घावधि में, मुद्रा की आपूर्ति में कोई भी बढ़ोतरी कीमत स्तर में हुई किसी वृद्धि में पूर्णतः प्रकट होगी, जिसमें विदेशी मुद्रा का कीमत (अथवा, विनिमय दर) भी शामिल होगा।

11.2 डॉर्नबुश प्रतिमान

किसी भी अर्थव्यवस्था में, इस प्रतिमान में ये तीन कारक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, यथा – परिसंपत्ति बाजार, पूँजी गतिशीलता और प्रत्याशाएँ। वह गति जिससे परिसंपत्ति बाजार किसी मौद्रिक संक्षोभ के प्रति समंजित होता है, उस गति से कहीं अधिक होती है जिससे वस्तु बाजार समंजित होता है। इस प्रतिमान में विनिमय दर के परिवर्तनशील पहलू इस तथ्य से उभरते हैं कि विनिमय दरें और परिसंपत्ति बाजार वस्तु बाजार की अपेक्षा कहीं तेजी से समंजित होते हैं। इस प्रतिमान के उद्देश्य से, हम मानकर चलते हैं कि *विश्व पूँजी बाजार में प्रत्येक देश छोटा–सा होता है जिससे वह किसी ज्ञात ब्याज दर का सामना करता ही है*।

उपर्युक्त दशाओं में रहकर पूँजी गतिशीलता प्रत्याशित निवल लाभों का समीकरण सुनिश्चित कर देती है। पूँजी अंतर्वाह तब दिखाई देता है जब एक मुद्रा (माना, डॉलर) पर ब्याज लाभ दूसरी मुद्रा (माना, यूरो) पर ब्याज लाभ से अधिक हो। इसी प्रकार, उक्त दशा के विपरीत होने पर पूँजी का बहिर्वाह दिखाई देता है। यहाँ हम एक और अव्यक्त अवकल्पना करेंगे कि घरेलू और विदेशी मुद्रा के पदों में नामकृत परिसंपत्तियाँ एक दूसरे की पूर्ण प्रतिस्थापी होती हैं। प्रारंभिक प्रक्रमों में पूँजी प्रवाह यह सुनिश्चित कर देते हैं कि 'अनावृत्त ब्याज सममूल्यता' (Uncovered Interest Parity) शर्त हमेशा पूरी होती है। इसका अर्थ यह है कि दो देशों के बीच ब्याज अन्तर सदैव दो मुद्राओं के बीच विनिमय दर में प्रत्याशित परिवर्तन के बराबर होगा। गणितीय रूप में,

$$\boldsymbol{i = i^* + \frac{E^e_{\$/€} - E_{\$/€}}{E_{\$/€}}} \qquad \ldots (11.1)$$

जहाँ i = डॉलर जमाओं पर लाभ दर, i^* = यूरो जमाओं पर लाभ दर, और $\frac{E^e_{\$/€} - E_{\$/€}}{E_{\$/€}}$ यूरो के मुकाबले डॉलर के मूल्यक्षय की प्रत्याशित दर है। उदाहरण के लिए, यदि $i = 6\%$ और $i^* = 5\%$, तो प्रत्याशा यह होनी चाहिए कि किसी वार्षिक आधार पर यूरो का 1 प्रतिशत

तक अधिमूल्यन हो ताकि यूरोपीय मौद्रिक संघ (EMU अथवा केवल EU) में निवेश पर लाभ समान ही हो (यथा, अमेरिका में निवेश पर लाभ के बराबर, और तदनुसार, अनावृत्त ब्याज सममूल्यता हो)। यदि $i < i^*$, जिससे निवेश पर लाभ यूरोपीय संघ के मुकाबले अमेरिका में कम होता हो, तो यूरो से प्रत्याशा होगी कि उसका विशिष्ट प्रतिशतता तक मूल्यक्षय हो (और डॉलर का अधिमूल्यन)। इसीलिए, हम कह सकते हैं कि कोई भी धनात्मक ब्याज दर अन्तर यूरो के मुकाबले डॉलर के किसी प्रत्याशित मूल्यक्षय अथवा डॉलर के संदर्भ में किसी अधिमूल्यन की ओर अग्रसर करता है। इस प्रकार, यदि डॉलर का यूरो के मुकाबले मूल्यक्षय होता है तो डॉलर पर ब्याज दर यूरो पर ब्याज दर से मूल्यक्षय की प्रत्याशित दर तक ऊपर चली जाएगी। इसका अर्थ यह हुआ कि *किसी अन्य देश (यूरोपीय संघ) की तुलना में स्वदेश (अमेरिका) के पक्ष में धनात्मक ब्याज अन्तर स्वदेशी मुद्रा ($) की अपेक्षा विदेशी मुद्रा (€) के प्रत्याशित अधिमूल्यन के बराबर होता है (जिसे किसी वार्षिक प्रतिशतता आधार पर व्यक्त किया जाता है)*।

आइए, अब 'मुद्रा बाजार' की संक्रिया की ओर रुख करते हैं। चूँकि घरेलू मुद्रा बाजार में संतुलन ही ब्याज दर को निर्धारित करता है, वास्तविक मुद्रा शेष हेतु माँग भी वास्तविक आय की आपूर्ति पर ही निर्भर करती है। इसीलिए, मुद्रा हेतु माँग को निम्नवत् दर्शाया जा सकता है ––

$$\mathbf{M_d = kPY} \qquad \ldots (11.2)$$

जहाँ, M_d = मात्रिक मुद्रा शेष में माँगी गयी मुद्रा, k = मात्रिक मुद्रा शेष व मात्रिक राष्ट्रीय आय का वांछित अनुपात, P = घरेलू कीमत स्तर, तथा Y = वास्तविक उत्पादन। यदि बाजार प्रतियोगी हों, और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में मार्ग में शुल्क दरें, परिवहन लागतें व अन्य बाधाएँ न हों, तो क्रय–शक्ति समतुल्लयता सिद्धांत के अनुसार, किसी भी जिंस का दाम अमेरिका और यूरोपीय संघ में एक समान होगा, यथा, $P_X (\$) = RP_X (€)$. तदनुसार,

$$\mathbf{P = RP^* \text{ or } \quad R = \frac{P}{P^*}} \qquad \ldots (11.3)$$

जहाँ R डॉलर की विनिमय दर है, P अमेरिका में डॉलर कीमतों का सूचकांक है और P* यूरोपीय संघ में यूरो कीमतों का सूचकांक। ध्यान दें कि अमेरिका और यूरोपीय संघ के लिए मुद्रा माँग फलन क्रमशः Md = kPY और $\mathbf{M_d^* = k^*P^*Y^*}$ {समी. (11.2) से} दर्शाए जाते हैं। इसके अलावा, चूँकि संतुलन में माँगी गयी मुद्रा की मात्रा आपूर्ति की गयी मुद्रा की मात्रा के बराबर होती है, हमें प्राप्त होते हैं ––

$$\mathbf{M_d = M_s} \text{ और } \mathbf{M_d^* = M_s^*} \qquad \ldots (11.4)$$

अतः, यूरोपीय संघ हेतु मुद्रा आपूर्ति फलन को अमेरिकी फलन से भाग देकर हमें प्राप्त होता है –

$$\mathbf{\frac{M_s^*}{M_S} = \frac{k^*P^*Y^*}{kPY}} \qquad \ldots (11.5)$$

समीकरण (11.5) के दोनों पक्षों को $\frac{P^*}{P}$ और $\frac{M_s^*}{M_S}$ से भाग देकर हमें प्राप्त होता है –

$$\mathbf{\frac{P}{P^*} = \frac{M_S k^*Y^*}{M_s^* kY}} \qquad \ldots (11.6)$$

किंतु चूँकि $R = \frac{P}{P^*}$, हम समीकरण (11.6) को निम्नवत् लिख सकते हैं –

$$\mathbf{R = \frac{M_S k^*Y^*}{M_s^* kY}} \qquad \ldots (11.7)$$

चूँकि k*, Y*, k और Y को स्थिरांक माना जाता है, विनिमय दर में परिवर्तन M_S और M_s^* में परिवर्तन के कारण होता है।

इसके अलावा, हमें ज्ञात है कि विनिमय दर 'मुद्रा की आपूर्ति एवं वास्तविक आय की वृद्धि दर से निर्धारित होती है [यथा, अन्य देशों में 'मुद्रा की आपूर्ति एवं वास्तविक आय की वृद्धि' के सापेक्ष]। उदाहरण के लिए, देश की मुद्रा की आपूर्ति में ऐसी वृद्धि कि वह अपनी वास्तविक आय व मुद्रा की माँग से बढ़कर हो, कीमतों में और देश की विनिमय दर में वृद्धि (यथा, मुद्रा के मूल्यक्षय) की ओर अग्रसर करती है। इसके विपरीत, देश की मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि (जो कि उसकी वास्तविक आय एवं मुद्रा की माँग में वृद्धि से कम हो) कीमतें और देश की विनिमय दर घटाने लगती है (जो कि मुद्रा का अधिमूल्यन कहलाएगा)।

11.2.1 ब्याज अन्तरों व कीमतों का प्रभाव

विनिमय दर में कोई भी प्रत्याशित परिवर्तन किसी समान प्रतिशतता तक विनिमय दर में तत्काल वास्तविक परिवर्तन की ओर प्रवृत्त करेगा। यह तथ्य 'ब्याज सममूल्यता शर्त' से सामने आता है। चलिए, हम अपना पिछला उदाहरण ही लेते हैं, यथा, $i = 6\%$ और $i^* = 5\%$, जहाँ यूरो से अपेक्षा है कि वह समीकृत होने के लिए दो परिसंपत्तियों पर लाभार्थ 1% तक की वृद्धि करेगा। यदि, किसी कारणवश, यूरो का प्रत्याशित अधिमूल्यन (यथा, डॉलर का मूल्यक्षय) 1 प्रतिशत तक न रहकर 2 प्रतिशत तक पहुँच जाए (वार्षिक आधार पर) तो निवेश पर लाभ अमेरिकी बाजार में 6 प्रतिशत की तुलना में यूरोपीय संघ में 7 प्रतिशत प्रति वर्ष (ब्याज में 5 प्रतिशत और वार्षिक आधार पर यूरो के प्रत्याशित अधिमूल्यन से 2 प्रतिशत) होगा। यह लाभ अमेरिका से यूरोपीय संघ की ओर तत्काल पूँजी बहिर्वाह की ओर अग्रसर करेगा। इसके फलस्वरूप, 'अनावृत्त ब्याज सममूल्यता' के कारण यूरो का अधिमूल्यन 1 प्रतिशत तक खिसक जाएगा। इसके अलावा, यूरो के प्रत्याशित मूल्यक्षय (डॉलर के अधिमूल्यन) में कोई भी परिवर्तन यूरो के किसी एक समान वास्तविक मूल्यक्षय (वार्षिक आधार पर डॉलर के अधिमूल्यन) से सुमेलित ही होना चाहिए, ताकि श्अनावृत्त ब्याज सममूल्यताश की शर्त को पूरा किया जा सके।

इसी प्रकार, जबकि कीमतें अल्पावधि में अनुदार हो सकती हैं, दीर्घावधि में ये लचीली हुआ करती हैं। ऐसा इसलिए है कि जब मुद्रा की आपूर्ति में कोई परिवर्तन विनिमय दर में तत्काल परिवर्तन ला देता है तो भी कीमतें धीरे–धीरे ही समंजित होती हैं। दूसरे शब्दों में, कीमतें और विनिमय दर एक ही चाल से नहीं चला करती हैं अर्थात् कीमतों के अनुदार स्वरूप के कारण वस्तु बाजार धीरे–धीरे अनुकूल बनता है जबकि वित्त बाजार तत्काल समन्वय कर लेता है। परिणामतः, 'बाजारों में पूँजी एवं कीमतों के बीच समंजन की गति में अंतर' के कारण, विनिमय दर अपने दीर्घावधि संतुलन स्तर का अतिलंघन कर जाती है।

11.2.2 लचीली विनिमय दर, मुद्रा और कीमतें

चलिए, मान लेते हैं कि विनिमय दर लचीली है, पूँजी काफी परिवर्तनशील है, और कीमतों को घटने–बढ़ने नहीं दिया जा रहा। ऐसी स्थिति में, हम देखेंगे कि मुद्रा की आपूर्ति में परिवर्तनों के प्रत्युत्तर में उत्पादन, विनिमय दर व कीमतें क्या करती हैं और कालांतर में उनका प्रत्युत्तर किस प्रकार सरल से जटिल रूप ले लेता है। सर्वप्रथम हम कीमतों की समंजन प्रक्रिया और अर्थव्यवस्था की स्थिति के सापेक्ष विनिमय दर पर चर्चा करेंगे। चित्र 11.1 ब्याज दर और उत्पादन का प्रभाव यह मानकर दर्शाता है कि Y^* पर पूर्ण नियोजन स्तर अभिभावी है। पूर्ण पूँजी परिवर्तनशीलता संबंधी अवकल्पना क्षैतिज भुगतान–शेष अनुसूची में प्रकट होती है, यथा, केवल $i=i_f$, की ब्याज दर पर ही भुगतान शेष संतुलन में होगा। यदि ब्याज दर ऊँची होगी तो पूँजी का निवल अंतर्वाह दिखाई देगा। इसके विपरीत, निम्न घरेलू ब्याज अभिभावी होने से पूँजी बाहर जाएगी और भुगतान शेष घाटा दर्शाएगा।

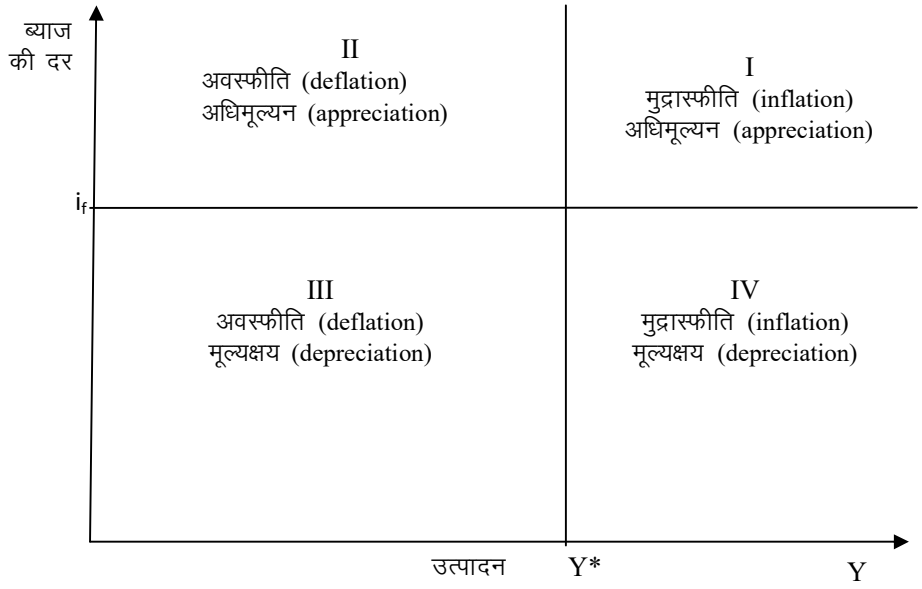

चित्र 11.1: विनिमय दर और कीमत का समायोजन

समंजन प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए, अब हम दो युक्तिपूर्ण अवकल्पनाओं पर विचार करेंगे। प्रथम, जब कभी उत्पादन पूर्ण नियोजन स्तर से ऊपर चला जाता है तो कीमतें बढ़ती हैं। दूसरी, चूँकि पूँजी अत्यधिक गतिशील होती है, ब्याज दर सदैव भुगतान–शेष अनुसूची की ओर अग्रसर होती है (क्योंकि ब्याज दर अन्य देशों की ब्याज दर इतर कहीं दूर नहीं जा सकती)। यहाँ समंजन प्रक्रिया की एक जटिल प्रवृत्ति तब सामने आती है जब अर्थव्यवस्था भुगतान शेष की ओर खिसकने लगती है। उदाहरण के लिए, कोई भी मौद्रिक विस्तार ब्याज दर में ह्रास ला देता है, जिससे पूँजी प्रवाह बहिर्मुखी हो जाता है। इसका अर्थ है कि लोग यूरो खरीदने के लिए डॉलर बेचने का प्रयास करते हैं, डॉलर का मूल्यक्षय होता है, निर्यात व आय में वृद्धि होती है, मुद्रा की माँग व ब्याज दर ऊपर चली जाती है, इत्यादि। ये कारक विनिमय दर को वापस भुगतान शेष की दिशा में लाने के लिए समंजन प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। यदि घरेलू ब्याज दरें बढ़ने लगती हैं तो यह क्रियाविधि उलट जाती है (माना कि मौद्रिक दृढ़ीकरण अथवा राजकोषीय विस्तार के कारण)। इस प्रकार की समंजन प्रक्रिया में, Y* के दाएँ किसी भी बिंदु पर दाम बढ़ते हैं और Y* के बाएँ कीमतें घटती हैं। भुगतान शेष के ऊपर स्थित बिंदु पूँजी अंतर्वाहों एवं मुद्रा अधिमूल्यन की ओर प्रवृत्त करते हैं और उसके नीचे स्थित बिंदु पूँजी बहिर्वाह एवं मुद्रा मूल्यक्षय की ओर। अत्यधिक तीव्र पूँजी गतिशीलता होने की स्थिति में विनिमय दर बड़ी तेजी से समंजन करती है ताकि अर्थव्यवस्था सदा भुगतान–शेष अनुसूची के निकट अथवा उस पर ही रहे।

11.2.3 मौद्रिक विस्तार के प्रभाव

किसी भी अर्थव्यवस्था में, ज्ञात कीमतों के साथ लचीली दरों और पूर्ण पूँजी गतिशीलता के तहत कोई भी मौद्रिक विस्तार मूल्यक्षय एवं वर्धित आय की ओर अग्रसर करता है।

हमारी रुचि यह जानने में होती है कि एक बार कीमतों में समंजनों का ध्यान रख लिए जाने के बाद इसे कैसे नियंत्रित किया जाता है। आप देखेंगे कि उत्पादन समंजन, नियत कीमतों की स्थिति में, अल्पकालिक होता है।

अतः, दीर्घावधि में, कोई भी मौद्रिक विस्तार प्रतियोगिता में कोई बदलाव न करते हुए, विनिमय मूल्यक्षय एवं ऊँची कीमतों की ओर अग्रसर करता है। इस प्रकार की स्थिति में,

आइए, हम अपने आरंभ बिंदु E (चित्र 11.2 में) पर विचार करते हैं, जहाँ पूर्ण नियोजन, भुगतान–शेष संतुलन, मौद्रिक संतुलन और घरेलू वस्तु बाजार में संतुलन दृष्टिगत होते हैं। अब यदि मौद्रिक विस्तार होता है और LM वक्र खिसककर LM′ पर चली जाती है तो नयी माल एवं मुद्रा बाजार संतुलन खिसककर E′ पर चली जाएगी। बल्कि इसकी वजह से ब्याज दर खिसककर विश्व स्तर से नीचे चली जाती है और विनिमय दर घट जाती है। इससे घरेलू प्रतियोगिता बढ़ती है और IS अनुसूची खिसककर IS′ पर चली जाती है। परिणामतः, अर्थव्यवस्था तेजी से E" की ओर बढ़ता है, यथा –– उत्पादन बढ़ता है, विनिमय दर घटती है और अर्थव्यवस्था को अपनी बाह्य प्रतियोगिता में लाभ मिलता है। परंतु E′′ पर उत्पादन पूर्ण रोजगार स्तर से ऊपर है और इसलिए कीमतें बढ़ती हैं। इसकी वजह से वास्तविक शेष राशियाँ घटने लगती हैं। जब वास्तविक मुद्रा भंडार, M/P, घटता है (दाम बढ़ने के कारण) तो LM वक्र बाएँ खिसक जाती है, ब्याज दर बढ़ने लगती है और पूँजी का अंतर्वाह होने लगता है। परिणामित अधिमूल्यन प्रतियोगिता में गिरावट की ओर अग्रसर करता है जिससे IS वक्र खिसककर वापस आरंभिक संतुलन स्तर पर आ जाती है। परिणामतः, IS और LM दोनों वक्र वापस खिसककर बिंदु E पर पहुँच जाती हैं। दूसरे शब्दों में, उपर्युक्त प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक कि वह बिंदु E पर नहीं पहुँच जाती। बिंदु E पर ब्याज दरें वापस आरंभिक स्तर पर लौट जाती हैं और ऐसा ही सापेक्ष कीमतें eP*/P करती हैं। बिंदु E से E′ तक जाने के दौरान विनिमय दर तत्काल घट जाती है, यथा, कीमतों में वृद्धि से पूर्व ही। परंतु जब कीमत बढ़ती हैं और वास्तविक शेष राशियाँ घट जाती हैं तो इस मूल्यक्षय का प्रभाव किंचित् ही विपरीत होता है। तदनुसार, समंजन अवधि की समस्त प्रक्रिया में, कीमतें और विनिमय दरें उसी अनुपात में बढ़ती हैं, जबकि

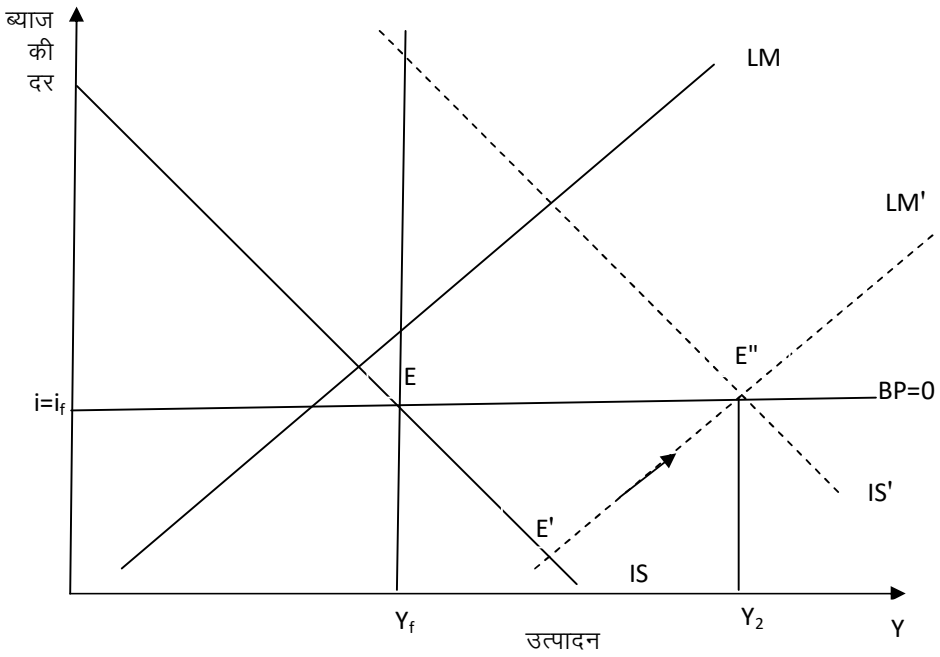

चित्र 11.2: मौद्रिक विस्तार के अल्पावधि एवं दीर्घावधि प्रभाव

सापेक्ष कीमत, eP*/P अपरिवर्तित ही रहती हैं। अतः, औसत माँग भी अपरिवर्तित ही रहती है। दीर्घावधि में, इसीलिए, मुद्रा की आपूर्ति पर इस प्रक्रिया का प्रभाव पूर्णतः निष्क्रिय रहता है।

बोध प्रश्न 1

1) 'अतिलंघन' शब्द का अर्थ स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) डॉर्नबुश के अतिलंघन प्रतिमान की अवकल्पनाएँ स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

3) भुगतान–शेष अनुसूची के ऊपर और नीचे के बिंदु क्या दर्शाते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

11.3 विनिमय दर अतिलंघन

ब्याज दरों और प्रत्याशाओं में परिवर्तन संतुलन में उथल–पुथल मचा देते हैं, जिससे निवेशक अपनी वित्तीय परिसंपत्तियों का पुनरावंटन करने लगते हैं। इससे एक नयी संतुलन सामने आती है या फिर संतुलित निवेश–सूची में कोई रद्दोबदल। इस समंजन में विभिन्न वित्तीय परिसंपत्तियों के *मूलधन* में कोई परिवर्तन शामिल होता है। अर्थव्यवस्था में वित्तीय परिसंपत्तियों के *कुल मूलधन* का संचित मान वार्षिक प्रवाहों (यथा, मूलधन में वृद्धियों) के मुकाबले बहुत अधिक होता है। इसके अलावा, ऐसी अन्य शक्तियाँ भी होती हैं जो विभिन्न वित्तीय परिसंपत्तियों के धारण को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए, देश की मुद्रा की आपूर्ति में कोई भी अप्रत्याशित वृद्धि देश की ब्याज दर में गिरावट की ओर ले जाती है। यह ह्रास निवेशकों को अपने घरेलू बाँड विदेशी बाँडों में बदल लेने को प्रवृत्त करता है। इस प्रकार का समंजन कभी–कभी बहुत बड़ा हो सकता है और यह प्रायः अत्यल्प अवधि के लिए हुआ करता है।

यह दृश्यघटना उस माल व्यापार के प्रवाह में परिवर्तनों से भिन्न होती है जो शनैः–शनैः और अपेक्षाकृत दीर्घ समयावधि में होता है।

मौद्रिक विस्तार घरेलू बाँडों को अनाकर्षक बनाते हुए घरेलू ब्याज दर में गिरावट की ओर ले जाता है। जब पूँजी प्रवाह घरेलू अर्थव्यवस्था से निकल कर बाहर की ओर हो जाता है तो विनिमय दर घटती है। यह मूल्यक्षय निर्यात प्रतियोगिता में सुधार कर आय बढ़ा देता है। तथापि, वस्तु बाजार और व्यापार प्रवाहों में समंजन वित्त बाजारों में होने वाले समंजनों की अपेक्षा काफी धीमे हुआ करते हैं। इस प्रकार, वित्तीय परिसंपत्तियों में मूलधन समंजन व्यापार प्रवाहों में होने वाले समंजनों की अपेक्षा प्रायः वृहद और शीघ्र क्रियान्वित होने वाले होते हैं।

वित्तीय परिसंपत्तियों में मूलधन समंजनों के आकार एवं तीव्रता में भिन्नताओं (व्यापार प्रवाहों में समंजनों के विपरीत) के उस प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ होते हैं जिसके द्वारा विनिमय दरें निर्धारित की जाती हैं। ऐसा इसलिए है कि कालांतर में इनकी गतिकी में परिवर्तन आता है। उदाहरण के लिए, देश की मुद्रा की आपूर्ति में कोई अप्रत्याशित वृद्धि और घरेलू ब्याज दरों में गिरावट विदेशी मुद्रा की माँग में बड़ी और त्वरित वृद्धि लाने वाले होते हैं। यह, बदले में, घरेलू मुद्रा के तत्काल और वृहद् मूल्यक्षय की ओर ले जाता है। ऐसा मूल्यक्षय वास्तविक बाजारों में बदलावों से होने वाले विनिमय दरों में लघुतर एवं अपेक्षाकृत मद्धिम परिवर्तनों को अनदेखा करता है (जैसे, व्यापार प्रवाहों में परिवर्तन)। दीर्घावधि में, वास्तविक बाजारों में विनिमय दरों पर उनका प्रभाव अभिभावी हो जाता है। अल्पावधि में, बहरहाल, विनिमय दरों में ऐसे परिवर्तन महज वित्तीय परिसंपत्तियों में कुछ मूलधन समंजनों में ही नजर आते हैं। यदि वित्तीय क्षेत्रों की ही भाँति वास्तविक क्षेत्र भी तत्काल प्रतिक्रिया देता हो तो कोई विनिमय दर अतिलंघन नहीं होता। यह विश्लेषणात्मक लेखा–जोखा हमें यह समझने मदद करता है कि क्यों अल्पावधि में विनिमय दरें (अपने दीर्घावधि संतुलन स्तर को अनदेखा कर) अतिलंघन करने लगती हैं। इस तथ्य को आगे हम सोदाहरण समझेंगे।

नयी संतुलन विनिमय दर

आइए, एक ऐसी स्थिति पर विचार करें जिसमें अमेरिका का केंद्रीय बैंक किसी समय बिंदु t_0 [जैसा कि चित्र 11.3 में खंड (a) दर्शाता है] पर अपनी मुद्रा की आपूर्ति 10 प्रतिशत तक बढ़ा देता है, यथा, \$100 अरब से बढ़ाकर \$110 अरब कर देता है। खंड (b) अमेरिकी मुद्रा की आपूर्ति में इस 10 प्रतिशत की अप्रत्याशित वृद्धि के प्रभाव को अमेरिकी ब्याज दर में एक तत्काल गिरावट के माध्यम से दर्शाता है (माना, 10 प्रतिशत से 9 प्रतिशत) [खंड (b), चित्र 11.3]। आप देखेंगे कि अमेरिकी मुद्रा की आपूर्ति में 10 प्रतिशत की वृद्धि अमेरिकी कीमतों पर कोई तात्कालिक प्रभाव नहीं डालती [जैसा कि खंड (c), चित्र 11.3 दर्शाता है]। हम यह मानकर चलें हैं कि अमेरिकी कीमतें 'अनुदार' हैं और इस कारण वे अपने मूल से 10 प्रतिशत अधिक होने तक (यथा, उस अवधि तक जिसमें कीमत सूचकांक 100 से बढ़कर 110 पर पहुँच जाता है) धीरे–धीरे ही बढ़ती हैं। चित्र 11.3 का खंड (d) दर्शाता है कि निवेशकों के घरेलू बाँडों (और मुद्रा शेष) को छोड़कर विदेशी बाँडों की ओर रुख कर लेने पर विनिमय दर (R) किस प्रकार बढ़ती है [यथा, डॉलर का मूल्यक्षय 10 प्रतिशत से अधिक होता है, जो कि दीर्घावधि में प्रत्याशित होता है (घरेलू मुद्रा की आपूर्ति में 10 प्रतिशत वृद्धि के कारण)]। अधिक विशेष रूप से, समय–बिंदु t_0 पर R तत्काल 16 प्रतिशत तक बढ़ जाता है (डॉलर का मूल्यक्षय हो जाता है)। प्रश्न, इसीलिए, यह है कि डॉलर का मूल्यक्षय तत्काल 10 प्रतिशत से भी अधिक क्यों हो जाता है, जबकि क्रय–शक्ति समतुल्ल्यता (PPP) सिद्धांत के अनुसार हम यह आशा करते हैं कि यह 10 प्रतिशत तक ही गिरेगा (यथा, उसी प्रतिशतता में जिसमें अमेरिकी मुद्रा की आपूर्ति बढ़ी है)?

यह स्पष्ट करने के लिए हमें एक बार फिर 'अनावृत्त ब्याज सममूल्यता' (UIP) शर्त का संदर्भ लेना होगा जो कि निम्नवत् दर्शायी जाती है –

$$i - i^* = EA \qquad \ldots (11.8)$$

जहाँ i अपने देश (अमेरिका) की ब्याज दर है, i^* दूसरे देश (यूरोपीय संघ) में ब्याज दर है और EA स्वदेशी मुद्रा (डॉलर, $) के संदर्भ में विदेशी मुद्रा (यूरो, €) का प्रतिवर्ष प्रत्याशित प्रतिशतता अधिमूल्यन है। समीकरण (11.8) की शर्त के अनुसार, घरेलू ब्याज दर (i) विदेशी ब्याज दर (i^*) जमा विदेशी मुद्रा का प्रत्याशित अधिमूल्यन के बराबर होती है। यदि हम सरलता की दृष्टि से आगे यह मान लें कि विदेशी मुद्रा का प्रत्याशित अधिमूल्यन शून्य है, तब अनावृत्त ब्याज सममूल्यता दर (UIP) शर्त का अर्थ केवल यह होगा कि $i = i^*$. तथापि, अमेरिकी मुद्रा की आपूर्ति में अप्रत्याशित वृद्धि अमेरिकी ब्याज दर में किसी कमी की ओर नहीं ले जाती। तदनुसार, अमेरिकी ब्याज दर (i) अब विदेशी ब्याज दर (i^*) से कम है और इसे विदेशी मुद्रा (€) के किसी भावी मूल्यक्षय [और यूरो के सामने डॉलर के मूल्यक्षय, से संतुलित किए जाने की आवश्यकता है ताकि अनावृत्त ब्याज सममूल्यता की शर्त एक बार फिर से पूरी हो जाए।

ऐसा एक मात्र तरीका कि हम भविष्य में डॉलर का दाम बढ़ने की प्रत्याशा भी कर सकें और दीर्घावधि में 10 प्रतिशत का एक निवल मूल्यक्षय भी देखें। यह होगा कि डॉलर की कीमत तत्काल 10 प्रतिशत से भी अधिक तक गिरे। अतः, खंड (d) दर्शाता है कि समय–बिंदु t_0 पर डॉलर की कीमत तत्काल 16 प्रतिशत तक गिरती है (R बढ़ता है) [$1/€1 से $1.16/€1 पर] तथा फिर धीरे–धीरे कालांतर में 6 प्रतिशत तक बढ़कर (R गिरता है) $1.10/€1 (यथा, जैसा कि $1.00 के मूलाधार से मापा गया) पर पहुँच जाती है (इस प्रकार अतिलंघन हट जाता है)। इससे दीर्घावधि में केवल 10 प्रतिशत का निवल मूल्यक्षय ही नजर आता है। दूसरे शब्दों में, आरंभिक अत्यधिक मूल्यक्षय के बाद डॉलर का दाम बढ़ता है ताकि उसका अल्प–मूल्यन दूर हो सके। ध्यान देने की बात है कि कालांतर में जब अमेरिकी कीमतें 10 प्रतिशत तक बढ़ती हैं तो अमेरिकी मात्रिक ब्याज भी 10 प्रतिशत के अपने मूल स्तर पर पहुँचने तक धीरे–धीरे बढ़ता है। इस प्रकार, खंड (d) में, डॉलर अधिमूल्यन केवल समय–बिंदु t_0 पर अत्यधिक मूल्यक्षय दूर करने के लिए होता है। इसे समझने का एक अन्य तरीका, जो कि वस्तु बाजार को प्रकाश में लाता है, यह जान लेना है कि डॉलर का तत्काल मूल्यक्षय देश के निर्यात में क्रमिक वृद्धि और उसके आयात में ह्रास की ओर प्रवृत्त करेगा। यह कालांतर में (शेष सभी कारक समान होने पर) डॉलर के अधिमूल्यन में परिणत होगा। चूँकि क्रय–शक्ति सममूल्यता (PPP) सिद्धांत से हमें ज्ञात है कि दीर्घावधि में डॉलर 10 प्रतिशत तक सस्ता होना ही चाहिए, भविष्य में डॉलर महँगा हो जाने की प्रत्याशा करने का एकमात्र तरीका डॉलर को मुद्रा की आपूर्ति में अप्रत्याशित वृद्धि के परिणामस्वरूप 10 प्रतिशत से भी अधिक तक तत्काल सस्ता कर देना होगा।

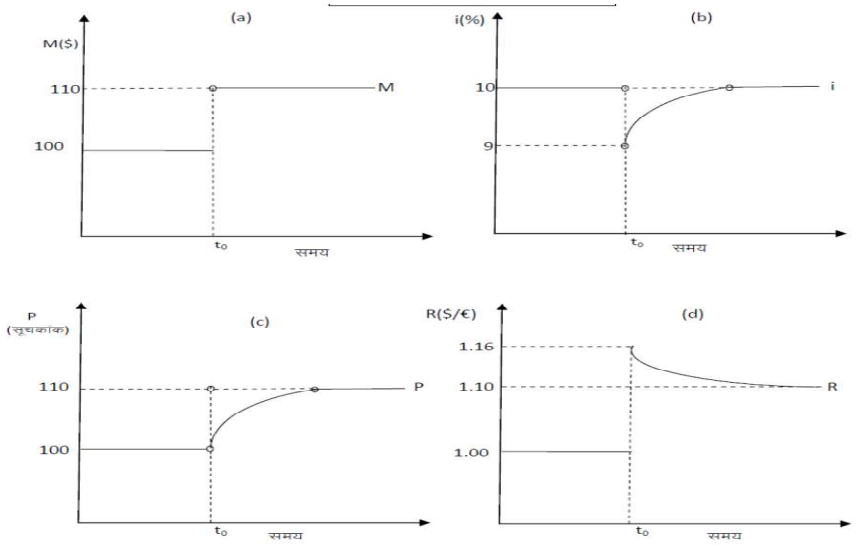

चित्र 11.3: एक नए संतुलन की ओर काल–पथ

बोध प्रश्न 2

1) किसी मौद्रिक विस्तार के दीर्घावधि प्रभाव क्या होते हैं?

.....

.....

.....

.....

2) 'विनिमय दर अतिलंघन' के पीछे कौन–से कारण उत्तरदायी होते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

11.4 सार–संक्षेप

अर्थव्यवस्था में लचीली विनिमय दर के तहत मौद्रिक नीति का विश्लेषण समंजन प्रक्रिया विषयक एक महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रस्तुत करता है। इस अंतर्दृष्टि के अनुसार, विनिमय दरें और कीमतें एक समान दर/गति से नहीं घटती–बढ़तीं। अतः, जब कोई मौद्रिक विस्तार ब्याज दर को नीचे धकेल देता है तो विनिमय दर तत्काल समंजित हो जाती है जबकि कीमतें धीरे–धीरे ही समंजित होती हैं। मौद्रिक विस्तार, अल्पावधि में, इसीलिए सापेक्ष कीमतों एवं प्रतियोगिता में किसी तत्काल एवं अप्रत्याशित परिवर्तन की ओर अग्रसर करता है। कालांतर में, न केवल कीमतें बढ़कर मुद्रा वृद्धि के समकक्ष पहुँच जाती हैं बल्कि विनिमय दर भी धन और कीमतों के ऊँचे स्तर को छूने लगती है। दीर्घावधि में, इसीलिए, वास्तविक चर अप्रभावित रहते हैं। अल्पावधि में, बहरहाल, वांछित संतुलन प्रयास किए जाने के लिए किसी समंजन क्रियाविधि की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए, विनिमय दर अपने दीर्घावधि संतुलन स्तर का अतिलंघन उस वक्त करती है जब, किसी बाधा को दूर करने के लिए, वह पहले सामान्य स्तर को लाँघती है और फिर धीरे–धीरे दीर्घावधि संतुलन स्तर पर लौट आती है। अतिलंघन का अर्थ, तदनुसार, यह है कि मौद्रिक नीति में परिवर्तन दरों में वृहत्तर परिवर्तन लाते हैं। ब्याज दर में परिणामित परिवर्तन, प्रत्याशाएँ एवं अन्य कारक (जो कि विभिन्न वित्तीय परिसंपत्तियों को धारण करने के लाभों और लागतों को प्रभावित करते हैं) वित्तीय परिसंपत्तियों के भंडार में तत्काल परिवर्तन हेतु दबाव बनाते हैं। चूँकि वास्तविक क्षेत्र (व्यापार प्रवाह) में समंजन कालांतर में धीरे–धीरे ही होते हैं, विनिमय दरों में समंजन का तत्काल भार (अत्यल्प एवं अल्प काल में) वित्त बाजारों द्वारा वहन किया जाता है। इसके लिए, झटपट एक यथासमय संतुलन कायम करने की दिशा में विनिमय दर अतिलंघन कर जाती है अथवा अपने दीर्घावधि संतुलन स्तर को अनदेखा कर आगे निकल जाती है। कालांतर में, जब वास्तविक (व्यापार) क्षेत्र से सामने आए समंजन में संचयी योगदान महसूस किया जाता है तो विनिमय दर अतिलंघन का निराकरण कर अपनी घट–बढ़ को उल्टा कर देती है। इससे संतुलन को अतिलंघन–पूर्व दौर के नजदीक फिर से स्थापित करने में मदद मिलती है।

11.5 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) यह शब्द किसी अर्थव्यवस्था के अभावग्रस्त होने के बाद 'विनिमय दर' के व्यवहार को दर्शाने के लिए प्रयोग किया जाता है। ऐसी घटना सामान्यतः उन अर्थव्यवस्थाओं में देखी जाती है जहाँ अल्पावधि में अनुदार कीमतों का प्रचलन हो।

2) (a) विनिमय दरें लचीली होती हैं; (b) अनावृत्त ब्याज समतुल्ल्यता सिद्ध होती है (यथा, अमेरिका और यूरो क्षेत्र में ब्याज दरों के बीच अंतर अमेरिकी डॉलर के मूल्यक्षय की प्रत्याशित दर के बराबर होता है); (c) मुद्रा की माँग ब्याज दर और उत्पादन पर निर्भर करती है; तथा (d) कीमतें अल्पावधि में तय की जाती हैं परंतु वे मौद्रिक संक्षोभोंका प्रतिकार करने को पूर्णतः समंजित दीर्घावधि में ही होती हैं।

3) भुगतान–शेष अनुसूची से ऊपर के बिंदु पूँजी अंतर्वाहों और मुद्रा अधिमूल्यन की ओर प्रवृत्त करते हैं, जबकि उससे नीचे के बिंदु पूँजी बहिर्वाहों और मुद्रा मूल्यक्षय को निरूपित करते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) समस्त समंजन प्रक्रिया के दौरान, कीमतें और विनिमय दरें एक ही अनुपात में बढ़ती हैं, जिससे सापेक्ष मूल्य eP^*/P रह जाती हैं, और इसीलिए, औसत माँग अपरिवर्तित रहती है। दीर्घावधि में इसी कारण मुद्रा पूर्णतः निष्क्रिय रहती है।

2) चूँकि कालांतर में व्यापार प्रवाहों में समंजन धीरे–धीरे ही होते हैं, विनिमय दरों में समंजन का अधिकांश बोझ अत्यल्प और अल्प अवधियों में वित्त बाजारों से ही पड़ता है। तदनुसार, विनिमय दर अपने दीर्घावधि साम्य स्तर का अतिलंघन करती है अथवा उसकी बगल से निकल जाती है ताकि वित्त बाजारों में संतुलन को तत्काल पुनर्स्थापित किया जा सके। कालांतर में, जब वास्तविक (जैसे, व्यापार) क्षेत्र की ओर से होने वाले समंजन में संचयी योगदान अनुभव किया जाता है तो विनिमय दर अपनी घट–बढ़ को उलट देती है और अतिलंघन का निराकरण हो जाता है।

इकाई 12 मुक्त अर्थव्यवस्था में समष्टि–अर्थशास्त्रीय नीति *

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 विषय–प्रवेश

12.2 अल्पावधि प्रभाव

12.3 दीर्घावधि प्रभाव

12.3.1 अस्थायी विनिमय दर

12.3.2 स्थायी विनिमय दर

12.4 आंतरिक और बाह्य संतुलन

12.4.1 संतुलन

12.4.2 व्यय नीतियाँ

12.5 बाह्य घाटा और बेकारी

12.6 सार–संक्षेप

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

12.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि–

- समष्टि–अर्थशास्त्रीय कारकों को नियंत्रण में रखने के लिए सरकार को उपलब्ध अल्पावधि प्रत्युत्तर क्रियाविधियाँ रूपायित कर सकें;
- समष्टि–अर्थशास्त्रीय कारकों पर सरकारी नीतियों के अल्पावधि प्रभाव को स्पष्ट कर सकें;
- अस्थायी एवं स्थायी विनिमय दर प्रणालियों के अनुसार सरकारी नीतियों के दीर्घावधि प्रभाव पर चर्चा कर सकें;
- स्पष्ट कर सकें कि सरकार द्वारा व्यय संबंधी नीतियों के सहारे 'आंतरिक एवं बाह्य संतुलन' को किस प्रकार सहकालिक रूप से नियंत्रित किया जा सकता है;
- किसी स्वॉन रेखाचित्र में चार क्षेत्रों का महत्व बता सकें; तथा
- स्पष्ट कर सकें कि किसी नीति–मिश्रण का प्रयोग कर 'बाह्य घाटा और बेकारी' किस प्रकार नियंत्रित किये जा सकते हैं।

12.1 विषय–प्रवेश

वर्तमान में, अनेक अर्थव्यवस्थाएँ वैश्विक अर्थव्यवस्थाएँ हैं। अतः, विदेशी मुद्रा, इक्विटी और जिंस के लिए बाजार एक दूसरे के साथ राष्ट्रीय के साथ–साथ वैश्विक स्तर पर भी पंक्तिबद्ध रहते हैं। पूँजी के मुक्त प्रवाह के कारण, विनिमय दर या तो बढ़ती है या फिर घटती है। इससे घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय मूल्य स्तर प्रभावित होते हैं। विनिमय–दर अवमूल्यन नीति के माध्यम से निर्यात प्रोत्साहन अपेक्षाकृत अधिक विदेशी मुद्रा दिलाता है। विस्तारवादी मौद्रिक नीति (उच्चतर धनापूर्ति के माध्यम से) कीमतों में वृद्धि कर ब्याज दर

* डॉ० आर्ची भाटिया, सह–आचार्य, हिमाचल प्रदेश केन्द्रिय विश्वविद्यालय, धर्मशाला।

घटा देती है। जब घरेलू ब्याज दरें कम होती हैं तो अंतर्राष्ट्रीय निवेशक अपना पैसा निकाल कर उसे ऐसे देशों में ले जाते हैं जहाँ उन्हें अधिक लाभ मिल सके।

अतः, धनापूर्ति, ब्याज दर और विनिमय दर विषयक नीतियाँ आपस में जुड़ी होती हैं; और वे पूँजी अंतर्वाह एवं बहिर्वाह की प्रमात्रा निर्धारित करती हैं।

अब तक मुक्त–अर्थव्यवस्था समष्टि अर्थशास्त्र संबंधी अपनी चर्चा में (यथा, इकाई 10 व 11 में), हम यह मानकर चल रहे थे कि कीमतें स्थिर रहती हैं (भले ही अर्थव्यवस्था फैलती–सिकुड़ती हो)। निर्विवाद रूप से, हम यह मानकर चले हैं कि कीमतें तभी बढ़ना शुरू होती हैं जब अर्थव्यवस्था पूर्ण नियोजन स्तर पर पहुँच जाती है। यथार्थ जगत् में, बहरहाल, नियमित व्यापार–चक्र प्रक्रिया में भी, अर्थव्यवस्था के फैलने और संकुचित होने पर कीमतें घटती–बढ़ती हैं। इसीलिए, इस इकाई में, हम नियत मूल्यों संबंधी अवकल्पना को नरम ही रखेंगे। हम यहाँ किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में उत्पादन, ब्याज दर और विनिमय दर विषयक राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों की प्रभाविता पर विचार करेंगे। हम लघु मुक्त अर्थव्यवस्था संबंधी अपनी अवकल्पना पर भी नरम रुख अपनाएँगे और आय एवं ब्याज दर विषयक राजकीय व्यय में परिवर्तनों के (व उनसे धनापूर्ति पर) प्रभाव का अध्ययन करेंगे। आरंभ हम अमेरिका जैसी किसी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था के अल्पावधि प्रतिमान के अध्ययन से करेंगे।

12.2 अल्पावधि प्रभाव

किसी भी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था में, निवल पूँजी बहिर्वाह वह धनराशि होती है जो घरेलू निवेशक देश के भीतर विदेशी निवेशकों को उधार दी गई धनराशि को घटाकर देश से बाहर उधार देते हैं। जब घरेलू ब्याज दर गिरती है तो घरेलू निवेशकों को देश से बाहर उधार देना अधिक आकर्षित करता है जबकि विदेशी निवेशकों को हमारे यहाँ उधार देना अपेक्षाकृत कम आकर्षित करता है। इस प्रकार, निवल पूँजी बहिर्वाह देखने में आता है। तदनुसार, हम कह सकते हैं कि निवल पूँजी बहिर्वाह (अथवा निवल विदेशी निवेश) ब्याज दर (i) से विलोमतः संबद्ध होता है। अतएव, यहाँ अनुप्रयोज्य तीन समीकरण निम्नवत् होंगे–

$$Y = C(Y - T) + I(i) + G + NX(e, Y) \quad \ldots (12.1)$$

$$M/P = L(i, Y) \quad \ldots (12.2)$$

$$NX(e, Y) = CF(i) \quad \ldots (12.3)$$

इनमें से पहले दो समीकरण इकाई 10 में उल्लिखित मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान में प्रयुक्त समीकरणों की भाँति ही हैं। तीसरे समीकरण के अनुसार, व्यापार शेष NX (जो निवल निर्यात निरूपित करता है) निवल पूँजी बहिर्वाह CF के बराबर होता है, तदंतर घरेलू ब्याज दर पर निर्भर करता है। समीकरण (12.3) को समीकरण (12.1) में प्रतिस्थापित करने पर हमें प्राप्त होता है ––

$$Y = C(Y - T) + I(i) + G + CF(i) \quad \ldots (12.4)$$

$$M/P = L(i, Y) \quad \ldots (12.5)$$

उत्पादन (Y) अब दो कारणों से ब्याज दर (i) पर निर्भर करता है। प्रथम, ऊँची ब्याज दर निवेश घटा देती है। दूसरे, उच्चतर ब्याज दर निवल पूँजी बहिर्वाह (CF) घटा देती है। निवल पूँजी बहिर्वाह में कमी का अर्थ होगा – विदेशी मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि और विनिमय दर का बढ़ना। तदनुसार, ऊँची ब्याज दर निवल निर्यात घटाने वाली होती है। इस प्रतिमान का विश्लेषण करने के लिए, आइए, चित्र 12.1 पर विचार करें जहाँ खंड (a)

शीर्ष अक्ष पर ब्याज दर i और क्षैतिज अक्ष पर आय Y के साथ IS –LM प्रतिमान दर्शाता है। जैसा कि हमें ज्ञात ही है, IS और LM वक्र मिलकर आय का साम्य स्तर और साम्य ब्याज दर निर्धारित करते हैं।

उक्त IS समीकरण में नयी निवल–पूँजी–बहिर्वाह शब्दावली, CF(i), IS वक्र को उस वक्र से कहीं अधिक समतल बना देता है जो उसके स्थान पर किसी बंद अर्थव्यवस्था में बनता। अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाह ब्याज दर के प्रति जितना अधिक उत्तरकारी उतना ही IS वक्र समतल नजर आता है। इसके अलावा, खंड (b) और (c) दर्शाते हैं कि IS –LM प्रतिमान से संतुलन किस प्रकार निवल पूँजी बहिर्वाह, व्यापार संतुलन और विनिमय दर निर्धारित करती है। विशेषकर, खंड (b) दर्शाता है कि ब्याज दर विदेशों में ऋणदान से निवल घरेलू निवेशक निर्धारित करती है और विदेशी निवेशकों को हमारे यहाँ पैसा लगाने के लिए प्रोत्साहित करती है, जिससे निवल पूँजी पर अंकुश लगता है।

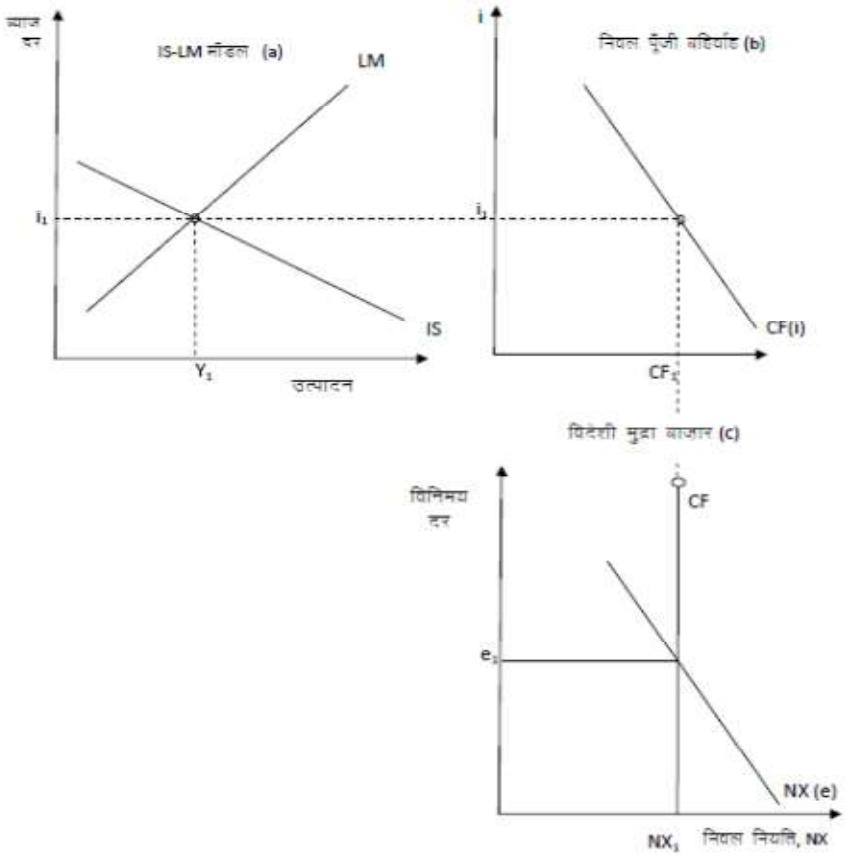

चित्र 12.1: किसी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था हेतु अल्पावधि मॉडल

आप देखेंगे कि खंड (b) में CF(i) नीचे की ओर खिसकता है क्योंकि कोई भी उच्चतर ब्याज दर घरेलू निवेशकों को देश से बाहर पैसा लगाने के प्रति हतोत्साहित करती है और विदेशी निवेशकों को हमारे देश में पैसा लगाकर लाभ कमाने के प्रति प्रोत्साहित करती है। खंड (c) दर्शाता है कि विनिमय दर यह सुनिश्चित करने के लिए समंजित होती है कि माल व सेवाओं का निवल निर्यात (NX) निवल पूँजी बहिर्वाह (CF) के बराबर हो [यह अवकल्पना हमने समीकरण (12.3) में की]। आइए, अब इस अवकल्पना के साथ सरकारी नीतियों (यथा, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों) के प्रभाव की जाँच करते हैं कि इस अर्थव्यवस्था में एक अस्थायी विनिमय दर अभिभावी है।

सरकारी नीतियों का प्रभाव

सरकारी खरीद में वृद्धि, अथवा करों में कोई कटौती, IS वक्र को दाएँ खिसका देती है। इस खिसकाव से आय–स्तर वृद्धि और ब्याज–दर वृद्धि का मार्ग प्रशस्त होता है [चित्र 12. 2 में खंड (a)]। ये दोनों प्रभाव किसी बंद अर्थव्यवस्था में नजर आने वाले प्रभावों की ही भाँति होते हैं। तथापि, किसी भी बड़ी मुक्त अर्थव्यवस्था में, ऊँची ब्याज दर निवल पूँजी बहिर्वाह घटा देती है [खंड (b)]। निवल पूँजी बहिर्वाह में गिरावट बाजार में डॉलरों की आपूर्ति घटा देती है। इससे विनिमय दर बढ़ती है [खंड (c) के अनुसार]। घरेलू माल विदेशी माल के मुकाबले अधिक महँगा हो जाएगा और निवल निर्यात घट जाएगा। अतः, किसी भी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था में, किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था से भिन्न, राजकोषीय विस्तार, किसी अस्थायी विनिमय दर के अनुसार, आय बढ़ा ही देगा। यहाँ आय पर प्रभाव, बहरहाल, किसी बंद अर्थव्यवस्था की अपेक्षा कम ही होता है (जहाँ राजकोषीय नीति के विस्तारकारी प्रभाव का अंशतः निवेश के स्थानाभाव के कारण प्रवेश–निषेध द्वारा प्रतिकार कर दिया जाता है)। इसके अलावा, किसी भी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था में, ब्याज दर में वृद्धि निवल पूँजी बहिर्वाह में अनुवर्ती ह्रास के साथ एक प्रतिकारी प्रभाव के रूप में काम करता है, जिससे मुद्रा का मान विदेशी–मुद्रा बाजार में बढ़ जाता है। परिणामतः, राजकोषीय–नीति गुणक और भी घट जाता है। साथ ही, ये प्रभाव इतने बड़े नहीं होते कि वे राजकोषीय नीति को अशक्त कर पाएँ (क्योंकि यहाँ एक लघु मुक्त अर्थव्यवस्था है), परंतु वे राजकोषीय नीति का प्रभाव कम अवश्य कर देते हैं।

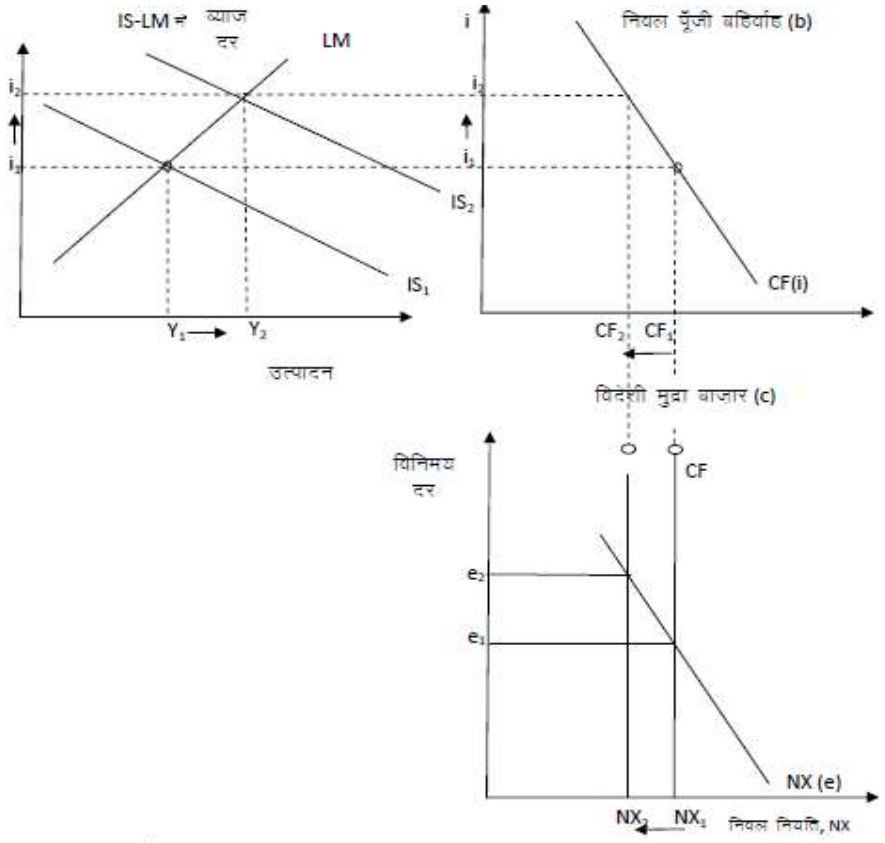

चित्र 12.2: किसी वृहद् मुक्त–अर्थव्यवस्था में राजकोषीय विस्तार

किसी मौद्रिक विस्तार के प्रभाव का अवलोकन करने पर, धनापूर्ति में कोई भी वृद्धि LM वक्र को दाएँ खिसका देती है [खंड (a), चित्र 12.3]। आय का स्तर बढ़ जाता है और ब्याज दर गिर जाती है। पुनः, ये प्रभाव किसी बंद अर्थव्यवस्था में दिखाई पड़ने वाले प्रभावों के समान ही होते हैं। फिर भी, खंड (b) के अनुसार, निम्नतर ब्याज दर उच्चतर निवल पूँजी बहिर्वाह की ओर अग्रसर करती है। इससे घरेलू बाजार में धनापूर्ति बढ़ जाती है क्योंकि विदेशी मुद्रा विनिमय दर को गिरा देती है [खंड (ब)]। घरेलू माल विदेशी माल की अपेक्षा सस्ता हो जाता है, जिससे निवल निर्यात बढ़ने लगता है। किसी भी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था में मौद्रिक प्रेषण क्रियातंत्र, तदनुसार, दो माध्यमों से काम करता है (किसी बंद अर्थव्यवस्था से भिन्न, जहाँ कोई भी मौद्रिक विस्तार निवेश को प्रोत्साहित कर ब्याज दर घटा देता है)। ये दोनों प्रभाव औसत आय के एक उच्चतर स्तर में परिणत होते हैं। अतः, IS वक्र पहले से अधिक चौरस होता है (किसी बंद अर्थव्यवस्था में अपनी चौरसता के मुकाबले) और LM वक्र में कोई भी ज्ञात परिवर्तन आय पर एक वृहत्तर प्रभाव डालेगा।

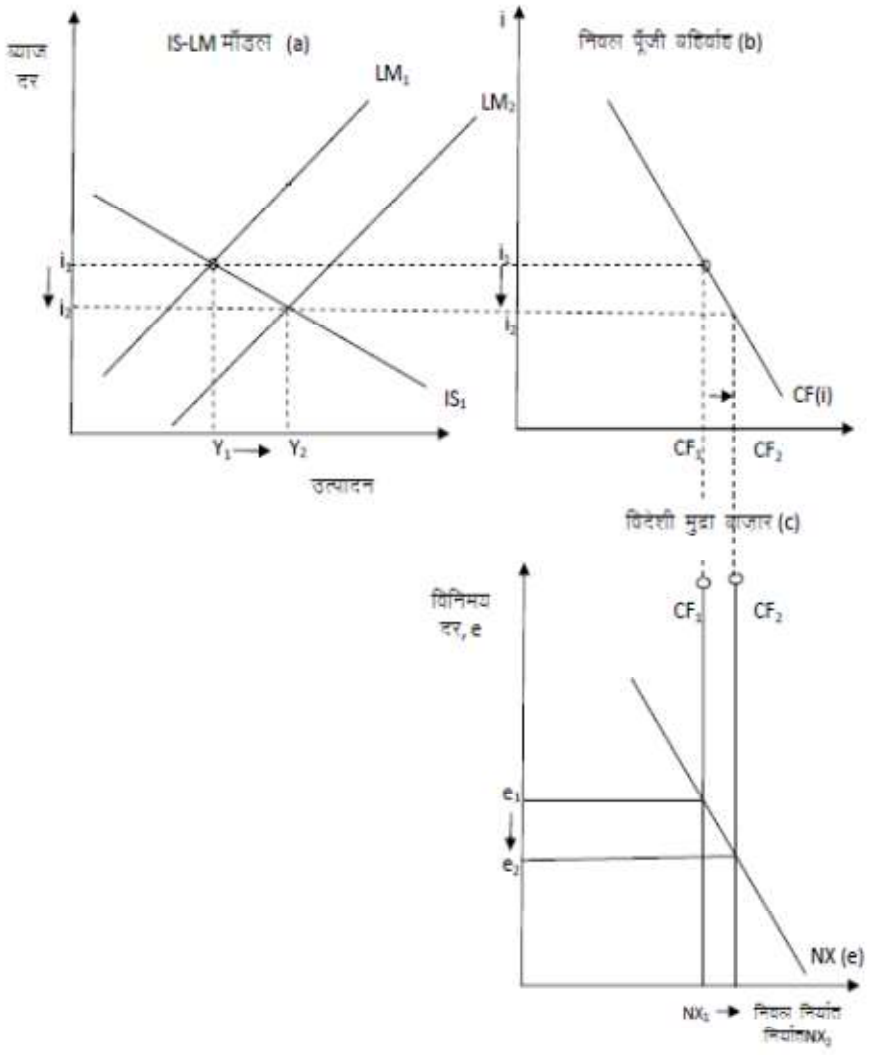

चित्र 12.3: किसी वृहद् अर्थव्यवस्था में मौद्रिक विस्तार

बोध प्रश्न 1

1) 'निवल पूँजी बहिर्वाह' ब्याज दर में परिवर्तनों से किस प्रकार जुड़ा होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अल्पावधि में किसी मुक्त अर्थव्यवस्था में किसी विस्तारकारी राजकोषीय नीति का क्या प्रभाव पड़ता है? स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

12.3 दीर्घावधि प्रभाव

विश्व अर्थव्यवस्था में, अंतर्राष्ट्रीय निवेशक सदैव प्रत्येक देश की मौद्रिक नीतियों और ब्याज–दर गतिविधियों का अवलोकन करते रहते हैं। किसी भी देश की मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियाँ उस देश के पूँजी खाते और भुगतान शेष को प्रभावित करती हैं।

मौद्रिक और राजकोषीय दिनों ही नीतियाँ भुगतान शेष व पूँजी अंतर्वाह के माध्यम से घरेलू के साथ–साथ विदेशी अर्थव्यवस्थाओं को भी प्रभावित कर सकती हैं। इकाई 10 में हमने मूल्य स्तर नियत रहने पर अल्पावधि में किसी लघु मुक्त अर्थव्यवस्था के लिए मंडल–फ्लेमिंग प्रतिमान पर चर्चा की थी। इस पाठांश में हम नियत मूल्यों संबंधी अवधारणा में रियायत देकर यह जाँच करेंगे कि मूल्य स्तर बदलने पर क्या होता है। हम पूर्ण पूँजी गतिशीलता संबंधी अवकल्पना में भी ढील देकर लचीले पूँजी प्रवाहों की कल्पना करके चलेंगे। इस संदर्भ में, भुगतान–शेष वक्र सकारात्मक रूप से अवनत होगा। इसके अलावा, जब भुगतान–शेष वक्र नियत विनिमय दर की अवकल्पना के साथ आरेखित किया जाता है तो कोई भी अवमूल्यन भुगतान–शेष वक्र को नीचे धकेल देता है। अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों पर सभी अथवा अधिकांश नियंत्रणों का निराकरण कर देने से भुगतान–शेष वक्र आय के पूर्ण नियोजन स्तर पर पहले से कहीं अधिक समतल (LM वक्र के दाएँ) हो जाता है।

12.3.1 अस्थायी विनिमय दर

सरकारी खर्चों में किसी वृद्धि (और/अथवा करों में कटौती जो कि निजी उपभोग बढ़ा देती है) के रूप में कोई भी विस्तारकारी राजकोषीय नीति IS वक्र को दाएँ खिसका देती है। इसके कारण माल बाजार किसी भी ज्ञात ब्याज दर के लिए राष्ट्रीय आय के किसी उच्चतर स्तर पर संतुलन में नजर आता है। दूसरी ओर, संकुचनकारी राजकोषीय नीति IS वक्र को बाएँ खिसका देती है। इसी प्रकार, कोई भी सरल मौद्रिक नीति (राष्ट्र की धनापूर्ति

में वृद्धि के रूप में) LM वक्र को दाएँ खिसका देती है, जो कि यह इंगित करता है कि राष्ट्रीय आय का स्तर धनापूर्ति में वृद्धि को आत्मसात कर लेने हेतु ऊँचा होना ही चाहिए। दूसरी ओर, कड़ी मौद्रिक नीति राष्ट्र की धनापूर्ति घटा देती है, जिससे LM वक्र बाएँ खिसक जाता है।

चित्र 12.4 में IS-LM और भुगतान–शेष वक्र बिंदु E पर प्रतिच्छेद करते हैं, जहाँ i1 ब्याज दर और Y1 आय स्तर दर्शाते हैं। कोई भी विस्तारकारी राजकोषीय नीति IS वक्र दाएँ खिसकाकर IS′ पर ले आती है, ताकि LM को Z पर काटा जा सके। चूँकि Z भुगतान–शेष वक्र के बाएँ अवस्थित है, राष्ट्र अपनी बाह्य शेष राशियों में अधिशेष ही दर्शाएगा। अपनी लचीली विनिमय दरों के साथ, घरेलू मुद्रा का मान विदेशी मुद्रा के सापेक्ष बढ़ता है और भुगतान–शेष (BP) वक्र बाएँ खिसककर BP′ पर चला जाता है। कोई भी विनिमय–दर अधिमूल्यन निवल निर्यात घटा देता है और IS वक्र में बाईं ओर खिसकाव प्रेरित कर उसे IS′ से IS′′ पर ले आता है। दूसरी ओर, विनिमय दर के अधिमूल्यन से घरेलू कीमतों में गिरावट आती है और फिर वास्तविक मुद्रा शेष में उछाल देखा जाता है। राष्ट्र की वास्तविक धनापूर्ति में यह विस्तार LM वक्र को दाहिने LM′ की ओर खिसका देता है। ऐसा तब तक जारी रहता है जब तक कि IS व LM वक्र BP वक्र पर प्रतिच्छेद नहीं करते और तीनों बाजार सहकालिक रूप से संतुलन (बिंदु E′ पर) में नहीं आ जाते। अपनी लचीली विनिमय दर के साथ दीर्घावधि में राजकोषीय विस्तार इसी कारण एक उच्चतर ब्याज दर (i2) और उच्चतर आय स्तर (Y2) में परिणत होता है। भुगतान शेष में अधिशेष के कारण विनिमय दर भी बढ़ती है।

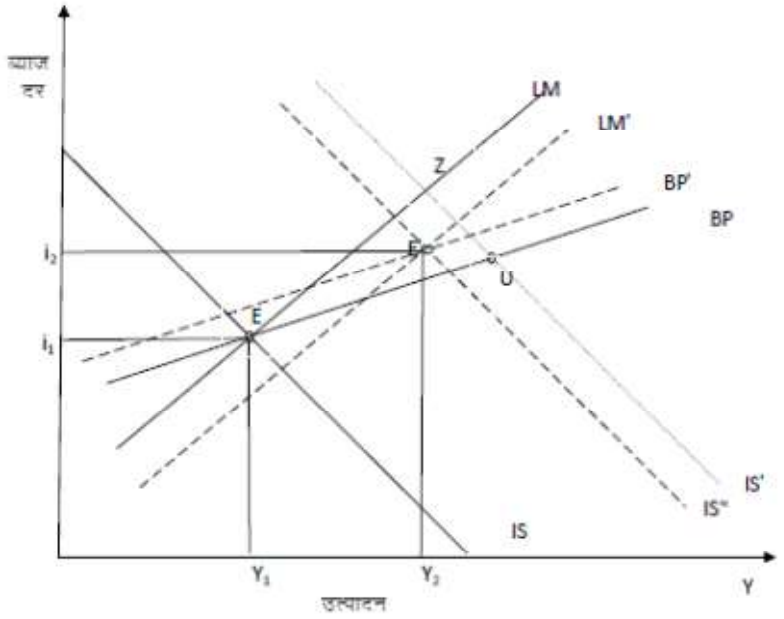

चित्र 12.4: लचीली विनिमय दर के अनुसार राजकोषीय नीति

चित्र 12.5 बिंदु E पर (जहाँ आय Y1 के बराबर है और ब्याज दर के बराबर) आंतरिक एवं बाह्य संतुलन के साथ देश की अर्थव्यवस्था पर मौद्रिक नीति का प्रभाव दर्शाता है। कोई भी सरल मौद्रिक नीति LM वक्र को दाएँ खिसकाकर LM′, पर भेज देती है, जहाँ यह IS वक्र को Z पर काटता है। बिंदु Z पर, उच्चतर आय और निम्नतर ब्याज दर (बिंदु E पर) के कारण देश एक बाह्य घाटा झेल रहा है। जब विनिमय दर लचीली होती है तो मुद्रा का अवमूल्यन होता है। इससे BP वक्र दाएँ खिसककर BP′ पर आ जाता है। विनिमय–दर अवमूल्यन IS को दाएँ IS′ पर खिसकाकर देश का व्यापारांतर सुधार देता है। इससे घरेलू

कीमतें बढ़ती हैं, जिससे वास्तविक धनापूर्ति घट जाती है। यह LM′ वक्र के दाएँ खिसककर LM′′ पर आ जाने में परिणत होता है। अब तीनों बाजारों में संतुलन पुनर्स्थापित हो जाएगी, जहाँ IS′ और LM′′ एक साथ BP′ वक्र को E′ प्रतिच्छेद करेंगे। तदनुसार, लचीली विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार, मौद्रिक विस्तार के परिणामस्वरूप दीर्घावधि में ब्याज दर गिरकर पर आ जाती है, साम्य आय बढ़कर Y2 पर पहुँच जाती है, और विनिमय दर का अवमूल्यन होता है। आप देखेंगे कि जब कोई देश किसी विस्तारकारी राजकोषीय नीति की बजाय किसी सरल मौद्रिक नीति के साथ पदार्पण करता है तो अंततः उसे कोई निम्नतर ब्याज दर ही अपनानी पड़ती है, जिससे दीर्घावधि संवृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है।

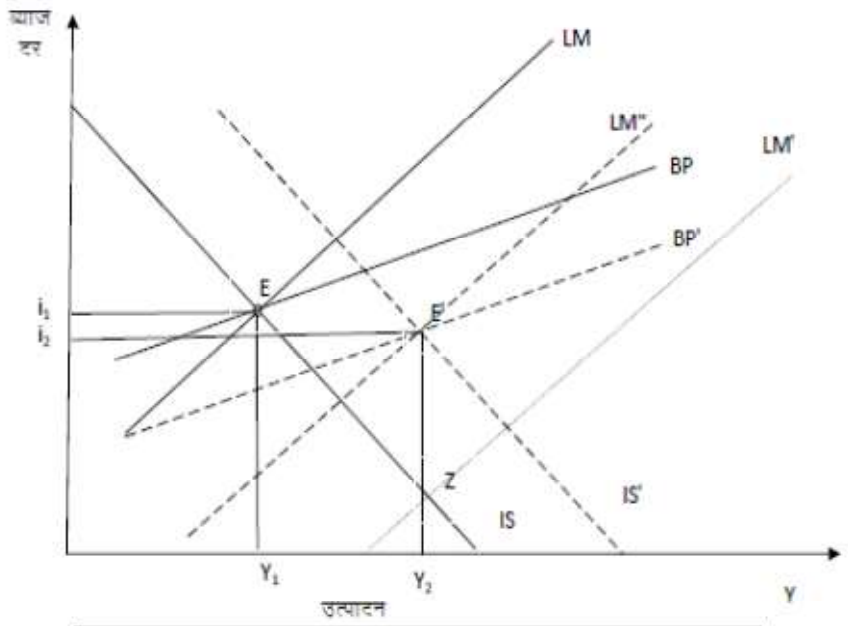

चित्र 12.5: दीर्घावधि में लचीली विनिमय दर के अनुसार मौद्रिक नीति

12.3.2 स्थायी विनिमय दर

स्थायी विनिमय दरों के अनुसार IS-LM प्राधार लचीली विनिमय दरों के अनुसार इस प्राधार से भिन्न नहीं होता। मौद्रिक और राजकोषीय नीतियाँ भी BP वक्र को सीधे प्रभावित नहीं करेंगी। इसीलिए, E पर किसी आरंभिक संतुलन से, विस्तारकारी राजकोषीय नीति IS वक्र को दाहिने खिसकाकर IS' पर ले आती है, जिससे वह LM वक्र का प्रतिच्छेदन Z पर करता है (जो कि BP के बाएँ अवस्थित है)। आप देखेंगे कि बाह्य शेष में अधिशेष की स्थिति पैदा हो जाती है। अतः, पूँजी अंतर्वाह विनिमय दर बढ़ाए जाने पर दबाव झेलते हुए विदेशी मुद्रा बाजार में घरेलू मुद्रा की माँग बढ़ा देते हैं। चूँकि केन्द्रीय बैंक विनिमय दर को नियत स्तरों पर ही कायम रखना चाहता है, वह विदेशी मुद्रा का क्रय कर घरेलू मुद्रा की आपूर्ति करेगा। घरेलू मुद्रा की बढ़ी आपूर्ति LM वक्र को दाएँ खिसकाकर वास्तविक शेष राशियाँ बढ़ा देती है। इससे अधिमूल्यन हेतु विनिमय दर पर दबाव बनता है और घरेलू कीमतें गिर जाती हैं। बिंदु E' पर एक नयी संतुलन कायम होती है, जहाँ उच्चतर आय स्तर Y2, उच्चतर ब्याज दर i2 और अपरिवर्तित विनिमय दर दृष्टिगत होते हैं।

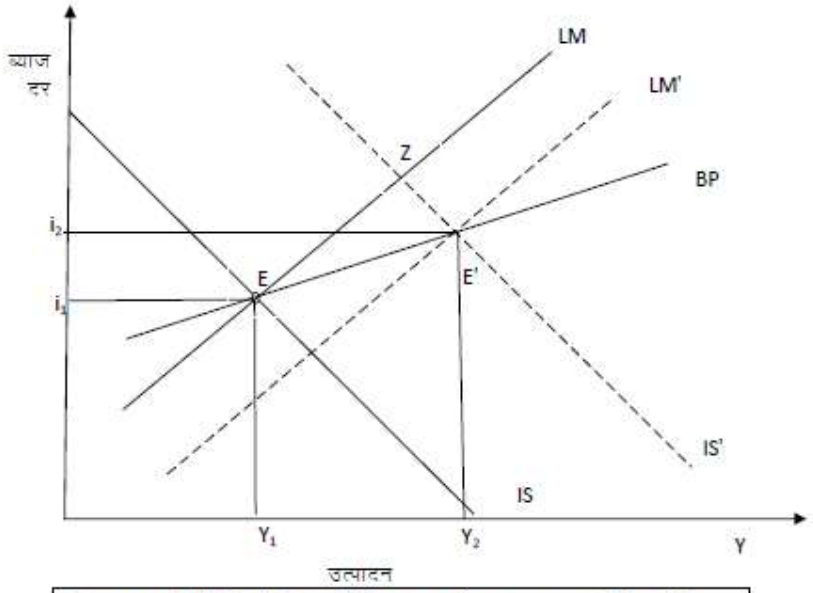

चित्र 12.6: दीर्घावधि में नियत विनिमय दर के अनुसार राजकोषीय नीति

यदि हम बिंदु E पर किसी आरंभिक साम्य स्थिति से, किसी विस्तारकारी मौद्रिक नीति के साथ, मौद्रिक नीति के प्रभाव पर विचार करें तो LM वक्र दाएँ खिसककर LM' पर आ जाता है (चित्र 12.7)। 'बाह्य शेष राशियों' में घाटा दर्शाते हुए, LM' वक्र IS वक्र को Z पर काटता है (जो कि BP के दाएँ अवस्थित है)। पूँजी बहिर्वाह घरेलू मुद्रा की माँग घटा देता है, जिससे अपने अवमूल्यन हेतु विनिमय दर पर दबाव बनता है। केंद्रीय बैंक घरेलू मुद्रा क्रय हेतु हस्तक्षेप करता है और विदेशी मुद्रा को बेच देता है (ताकि घरेलू–मुद्रा आपूर्ति का आधिक्य घट सके)। इससे शेष धनराशियों की आपूर्ति में कमी पैदा होती है। विनिमय दर पर दबाव कम होता है, जिससे घरेलू कीमतों में उछाल आता है। कीमतों में वृद्धि और नामिक शेष राशियों में कमी का संयुक्त प्रभाव वास्तविक शेष राशियों में गिरावट ला देता है। परिणामतः, LM' वक्र पूर्णतः बाएँ खिसककर स्ड पर आ जाता है। तदनुसार, पूँजी के परिवर्तनशील और कीमतों के लोचदार होने पर मौद्रिक विस्तार का साम्य आय और ब्याज दर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

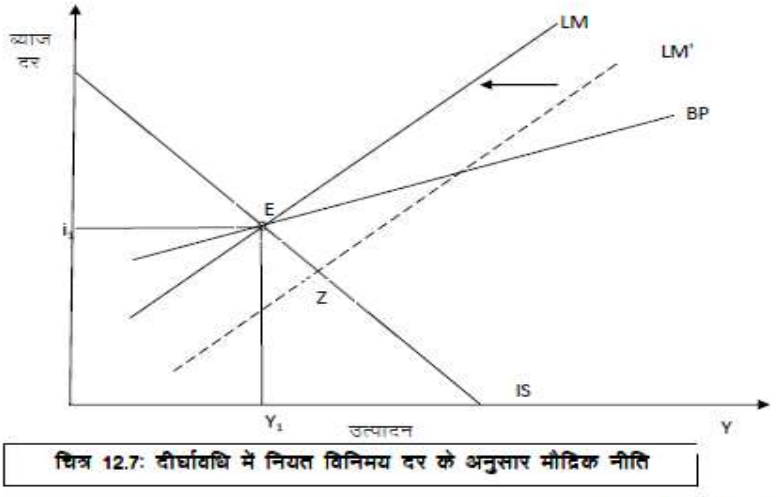

चित्र 12.7: दीर्घावधि में नियत विनिमय दर के अनुसार मौद्रिक नीति

इस प्रकार, नियत विनिमय दर के अनुसार मौद्रिक नीति अल्पावधि और दीर्घावधि दोनों में निष्प्रभावी रहती है। इसीलिए, इस नीति को राजकोषीय नीति पर ही केंद्रित रखना होता है ताकि पूर्ण नियोजन लाया जा सके। लचीली विनिमय दरों के अनुसार, राजकोषीय और मौद्रिक दोनों ही नीतियाँ उत्पादन को किंचित् परिवर्तन करने में प्रभावी सिद्ध होती हैं। तथापि, विस्तारकारी राजकोषीय नीति ब्याज दर में वृद्धि की ओर अग्रसर करती है जबकि सरल मौद्रिक नीति घरेलू ब्याज दर में गिरावट की ओर ले जाती है, और इस प्रकार संवृद्धि को बढ़ावा देने हेतु एक बेहतर नीति विकल्प सिद्ध होती है।

बोध प्रश्न 2

1) किसी लचीली विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार दीर्घावधि में कोई विस्तारकारी मौद्रिक नीति आय और ब्याज दर को किस प्रकार प्रभावित करती है?

.....

.....

.....

.....

2) नियत विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार किसी विस्तारकारी राजकोषीय नीति का दीर्घावधि प्रभाव क्या होता है?

.....

.....

.....

.....

12.4 आंतरिक और बाह्य संतुलन

किसी देश के सर्वाधिक महत्वपूर्ण आर्थिक लक्ष्य या उद्देश्य होते हैं – (i) पर्याप्त आंतरिक संतुलन कायम रखना, और (ii) समुचित बाह्य संतुलन बनाए रखना। बाह्य संतुलन के लिहाज से, अर्थव्यवस्था भुगतान शेष के साथ संतुलन में होनी चाहिए। अल्पावधि में निचय अक्षुण्ण रखने होते हैं जबकि दीर्घावधि में उन्हें घटाया–बढ़ाया जा सकता है। आंतरिक संतुलन तब नजर आता है जब उत्पादन पूर्ण नियोजन स्तर पर होता है। यदि किसी देश में ब्याज दर वैश्विक ब्याज दर से ऊँची होती है तो विदेशों से उस देश की ओर पूँजी प्रवाह असीमित हो जाता है। ऐसे में भुगतान शेष व्यापारांतर और पूँजी अंतर्वाह दोनों से प्रभावित होता है। इसे निम्नवत् लिखा जा सकता है–

$$BoP = NX\ (Y, Y_f, R) + CF\ (i - i^*) \quad \ldots (12.6)$$

उपर्युक्त समीकरण से स्पष्ट है कि व्यापारांतर घरेलू आय, विदेशी आय और वास्तविक विनिमय दर से प्रभावित होता है। यदि किसी देश के आयात और ब्याज दर में गिरावट आती है तो भुगतान शेष की स्थिति और बिगड़ जाती है। परंतु यदि ब्याज दर बढ़कर वैश्विक स्तर से ऊपर चली जाती है तो पूँजी खाते में सुधार आता है। यदि पूँजी अंतर्वाह

बढ़ता है तो उसे व्यापार घाटे के वित्त पोषण हेतु प्रयोग किया जा सकता है। ब्याज दर को भुगतान शेष में संतुलन बिंदु हासिल करने के उद्देश्य से कायम रखा जा सकता है।

12.4.1 संतुलन

आंतरिक और बाह्य दोनों ही प्रकार के संतुलन में संतुलन हासिल करने के लिए अनेक देश दो नीति उपाय अपनाते हैं। ये उपाय हैं – (i) व्यय–परिवर्तनकारी नीतियाँ और (ii) व्यय–विनिमयकारी नीतियाँ। व्यय–परिवर्तनकारी अर्थात् खर्च में बदलाव लाने वाली नीतियों में राजकोषीय और मौद्रिक दोनों नीतियाँ शामिल होती हैं। राजकोषीय नीति का अर्थ होता है – सरकारी खर्चों व करों अथवा इन दोनों में हेर–फेर। इकाई 10 में उल्लिखित साम्य अवस्था (समीकरण 10.1) को दोहराने पर, जहाँ G का अर्थ है सरकारी खर्च और T का अर्थ है कर, हमें प्राप्त होता है ––

$$I + X = S + M \quad \ldots (12.7)$$

$$I + X + G = S + M + T \quad \ldots (12.8)$$

सरकारी खर्च (G) निवेश (I) व निर्यात (X) की भाँति व्यवस्था में अंतःक्षेप कहलाते हैं, जबकि कर (T) को बचत (S) एवं आयात (M) की भाँति व्यवस्था से निःस्राव के रूप में देखा जाता है। अब समीकरण (12.8) को पुनर्व्यवस्थित कर इस प्रकार लिखा जा सकता है –

$$G\text{-}T = (S - I) + (M - X) \quad \ldots (12.8.a)$$

समीकरण (12.8) के अनुसार, किसी भी राजकीय बजट घाटे ($G > T$) का वित्त पोषण I पर S के आधिक्य और/अथवा X पर M के आधिक्य से किया जा सकता है। मौद्रिक नीति देश की धनापूर्ति में ऐसे परिवर्तन की अपेक्षा करती है जो ब्याज दरों को प्रभावित करे। घरेलू ब्याज दर में गिरावट आयात की ही भाँति घरेलू निवेश और आय के स्तर में वृद्धि को प्रेरित करती है। दूसरी ओर, ब्याज दर में गिरावट अल्पावधि पूँजी बहिर्वाह अथवा लघुकृत अंतर्वाह को प्रेरित करती है।

व्यय–विनिमयकारी नीतियाँ विनिमय दर में परिवर्तन (यथा, अवमूल्यन अथवा पुनर्मूल्यन) की ओर संकेत करती हैं।

अवमूल्यन खर्चों का रुख विदेशी से मोड़कर घरेलू जिंसों की ओर कर देता है और उसे देश के भुगतान शेष में किसी घाटे की प्रतिपूर्ति हेतु प्रयोग किया जा सकता है। दूसरी ओर, पुनर्मूल्यन खर्चों का रुख घरेलू से मोड़कर विदेशी उत्पादों की ओर कर देता है और उसे देश के भुगतान शेष में अधिशेष सही करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

12.4.2 व्यय नीतियाँ

इस पाठांश में हम बात पर विचार करेंगे कि कोई देश व्यय–परिवर्तनकारी और व्यय–विनिमयकारी नीतियों के साथ आंतरिक और बाह्य संतुलन एक साथ कैसे हासिल कर सकता है। सरलता की दृष्टि से, हम शून्य अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाह की कल्पना करते हैं (ताकि भुगतान शेष देश के व्यापारांतर के बराबर रहे)। हम यह भी मानकर चलेंगे कि कीमतें स्थिर बनी हुई हैं। 'विनिमय दर' (R) को हम शीर्ष अक्ष पर मापेंगे (चित्र 12.8)। यहाँ R में कोई भी वृद्धि अवमूल्यन दर्शाती है और कोई भी ह्रास (R में) पुनर्मूल्यन दर्शाता

है। इसके क्षैतिज अक्ष पर घरेलू व्यय अथवा समावेशन (D) मापा जाता है। घरेलू उपभोग एवं निवेश के अलावा, D में सरकारी खर्चों का भी समावेशन होता है।

रेखाचित्र में, EE वक्र विनिमय दरों और वास्तविक घरेलू खर्चों के विभिन्न संयोजन दर्शाता है, जो कि बाह्य संतुलन में परिणत होते हैं। यह वक्र (EE) धनात्मक रूप से अवनत है क्योंकि कोई भी उच्चतर R (अवमूल्यन के कारण) देश का निर्यात उसके आयात के सापेक्ष सुधार देता है। बाह्य संतुलन कायम रखने के लिए घरेलू समावेशन को अवश्य ही बढ़ाया जाना चाहिए ताकि आयात को उच्चतर निर्यात के मुकाबले लाने के लिए प्रेरित किया जा सके ।

दूसरी ओर, YY वक्र विनिमय दरों (R) और घरेलू समावेशन (D) के विभिन्न संयोजन दर्शाता है जो कि आंतरिक संतुलन में परिणत होता है (यथा, मूल्य स्थिरता के साथ पूर्ण नियोजन। यह वक्र (YY) ऋणात्मक रूप से अवनत होता है। बिंदु R2 से R1 तक एक निम्नतर R (पुनर्मूल्यन) आय को घटाकर उसे पूर्ण नियोजन स्तर से नीचे ले आता है। घरेलू समावेशन आय को D2 से बढ़कर D3 पर आने के लिए बढ़ना ही चाहिए ताकि आंतरिक संतुलन (YY पर बिंदु J) कायम रखा जा सके। केवल बिंदु F पर ही (यथा, R2 व D2 पर ही) अर्थव्यवस्था सहकालिक रूप से बाह्य एवं आंतरिक संतुलन में नजर आ सकती है, यथा जहाँ EE और YY वक्र परस्पर प्रतिच्छेद करते हों। प्रथम वक्र (EE) के ऊपर अवस्थित बिंदु 'बाह्य अधिशेष' दर्शाते हैं और उसके नीचे स्थित बिंदु 'घाटा'। द्वितीय वक्र (YY) के नीचे स्थित बिंदु बेकारी दर्शाते हैं जबकि उसके ऊपर अवस्थित बिंदु मुद्रास्फीति। अतएव, हम बाह्य एवं आंतरिक असंतुलन के चार क्षेत्र निम्नवत् परिभाषित कर सकते हैं ––

क्षेत्र I: बाह्य अधिशेष एवं आंतरिक बेरोजगारी

क्षेत्र II: बाह्य अधिशेष एवं आंतरिक मुद्रास्फीति

क्षेत्र III: बाह्य घाटा एवं आंतरिक मुद्रास्फीति

क्षेत्र IV: बाह्य घाटा एवं आंतरिक बेरोजगारी

चित्र 12.8 से, हम बिंदु F तक पहुँचने के लिए वांछित व्यय–परिवर्तनकारी एवं व्यय–विनिमयकारी नीतियों का संयोजन निर्धारित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, बिंदु C (घाटा और बेरोजगारी) से आरंभ करने पर, विनिमय दर (R) और घरेलू समावेशन (D) दोनों को ही बिंदु F तक पहुँचने के लिए बढ़ाया जाना चाहिए। केवल पूर्ववर्ती (R) को बढ़ाने पर अर्थव्यवस्था बाह्य संतुलन (EE वक्र पर बिंदु C') हासिल कर सकती है अथवा R में एक बेहतर वृद्धि के साथ आंतरिक संतुलन (YY वक्र पर बिंदु C")।

वह ये दोनों अवस्थाएँ एक साथ हासिल नहीं कर सकती। इसी प्रकार, केवल घरेलू समावेशन बढ़ाकर उसे केवल आंतरिक संतुलन (YY वक्र पर बिंदु J) ही हासिल होगा, जो कि फिर बाहरी घाटा दर्शाने लगती है (क्योंकि अर्थव्यवस्था EE वक्र से नीचे आ जाएगी)। तदनुसार, उक्त दोनों लक्ष्यों को एक साथ हासिल करने के लिए दोहरी नीतियों का एक अंशांकित समावेशन वांछित होता है।

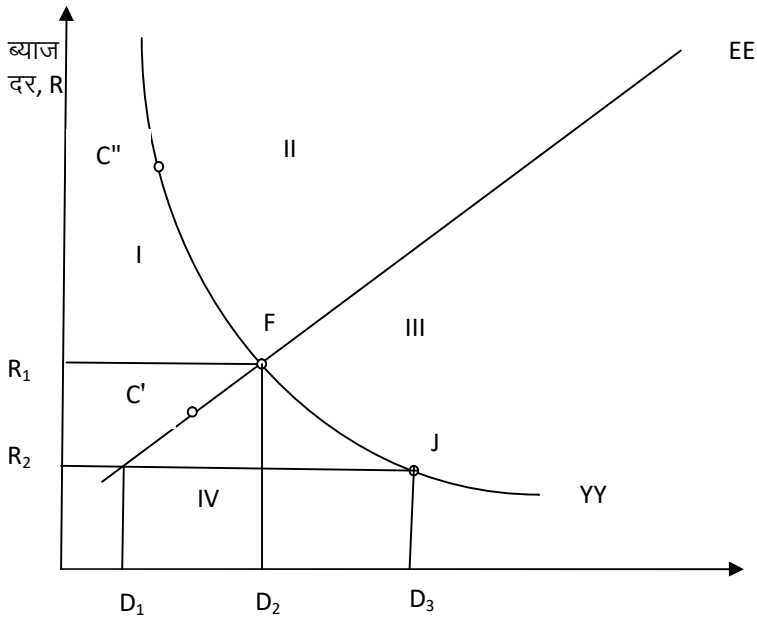

स्वॉन रेखाचित्र रूप से ऑस्ट्रेलियाई अर्थशास्त्री ट्रेवर स्वॉन द्वारा वर्ष 1956 में प्रकाशित किया गया। यह अपने आंतरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के संतुलन के लिहाज़ से किसी अर्थव्यवस्था के विश्लेषण का तरीका है। इसके Y-अक्ष पर वास्तविक विनिमय दर जबकि X-अक्ष पर घरेलू माँग दर्शायी जाती है। व्यय–विनिमयकारी एवं व्यय–परिवर्तनकारी दोनों नीतियों का घालमेल प्रायः आंतरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के संतुलन हासिल करने के लिए आवश्यक होता है।

चित्र 12.8: स्वॉन रेखाचित्र

12.5 बाह्य घाटा और बेकारी

आइए, पहले इस बात पर विचार करते हैं कि राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों को आंतरिक एवं बाह्य संतुलन के लिए किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए, हम अपूर्ण पूँजी गतिशीलता की कल्पना कर बाह्य घाटे और बेकारी की स्थिति से चर्चा आरंभ करेंगे। अपूर्ण पूँजी गतिशीलता यह संकेत देती है कि अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाह अंतर्राष्ट्रीय ब्याज अवकलों में परिवर्तनों के प्रति अधिक उत्तरकारी नहीं है। भुगतान–शेष (BP) वक्र LM वक्र की अपेक्षा अधिक ढालू है और राष्ट्रीय आय के पूर्ण नियोजन स्तर (Yf) पर LM वक्र के बाएँ अवस्थित है। अब हम किसी ऐसी आरंभिक स्थिति पर विचार करते हैं जहाँ IS और LM वक्र तो बिंदु E पर प्रतिच्छेद करते हों परंतु BP वक्र ऐसा न करता हो (देखें चित्र 12.9)। इसका अर्थ यह हुआ कि घरेलू अर्थव्यवस्था i1 और Y1 पर संतुलन (बेकारी के साथ) में है, परंतु अपने भुगतान शेष की दृष्टि से अर्थव्यवस्था के सामने घाटा है (क्योंकि BP वक्र पर बिंदु E बिंदु B के दाएँ अवस्थित है)। यह अर्थव्यवस्था विस्तारकारी राजकोषीय नीति (जो कि IS वक्र को खिसकाकर IS' के दाएँ कर दे) और एक अधिक कड़ी मौद्रिक नीति (जो कि LM वक्र को खिसकाकर LM' के बाएँ कर दे) अपनाकर बाहरी संतुलन के साथ पूर्ण नियोजन स्तर (Yf के उत्पादन वाले) पर पहुँच सकती है। इससे IS' और LM' दोनों ही वक्र BP वक्र को i2 व Yf पर प्रतिच्छेद करने लगते हैं। पूर्ण नियोजन स्तर Yf पर पहुँचने, और साथ ही, अपने भुगतान शेष में संतुलन हासिल करने के लिए, देश को कहीं अधिक सशक्त विस्तारकारी नीति और कहीं अधिक ही कड़ी मौद्रिक नीति का अनुसरण करना होगा। तदनुसार, आंतरिक एवं

बाह्य संतुलन एक साथ लाने के लिए दोपरस्पर विरोधी नीतियाँ – एक विस्तारकारी राजकोषीय नीति और एक कठोरतर मौद्रिक नीति – आवश्यक होती हैं।

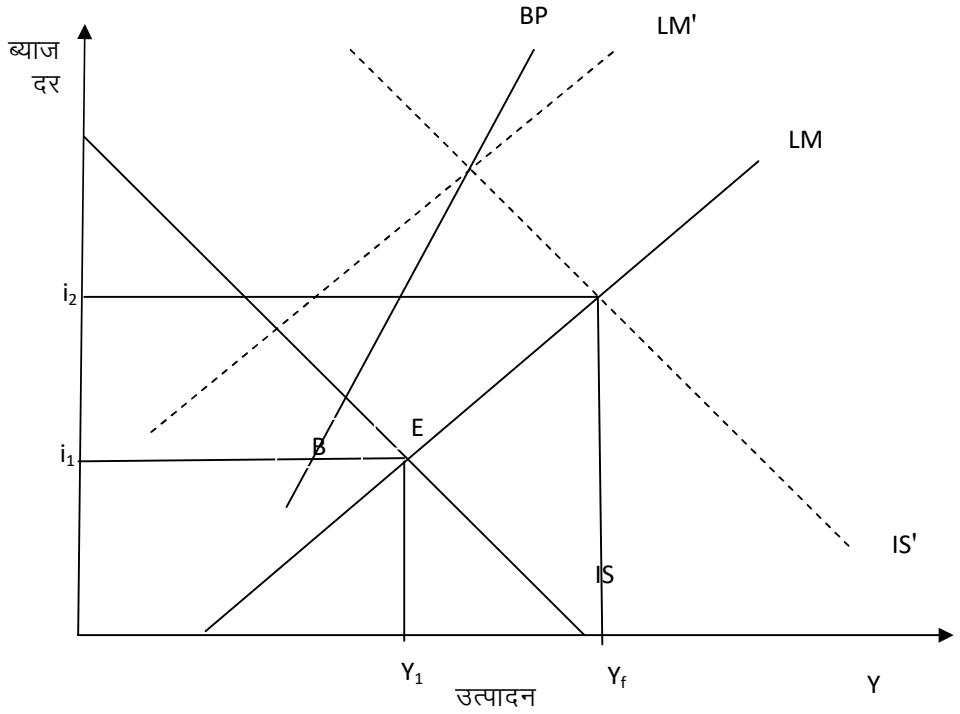

चित्र 12.9: घरेलू बेकारी और बाह्य घाटे से राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति

इष्टतम संतुलन हेतु नीति मिश्रण

इस प्रकार, उपर्युक्त से स्पष्ट है कि हमें आंतरिक और बाह्य संतुलन एक साथ लाने के लिए नीति मिश्रण अपनाना पड़ता है। इसके लिए, चित्र 12.10 पर विचार करें, जहाँ मूल बिंदु से दूर क्षैतिज अक्ष के छोर से दूसरे छोर तक गतिविधि विस्तारकारी राजकोषीय नीति (यथा, उच्चतर राजकीय व्यय और/अथवा निम्नतर कर) की ओर संकेत करती है, जबकि मूल बिंदु से शीर्ष अक्ष के एक छोर से दूसरे छोर तक गतिविधि कड़ी मौद्रिक नीति (यथा, देश की धनापूर्ति में कटौतियाँ और उसकी ब्याज दर में वृद्धियाँ) की ओर संकेत करती है। यहाँ IB रेखा राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाती है जो आंतरिक संतुलन (यथा, मूल्य स्थिरता के साथ पूर्ण नियोजन) में परिणत होते हैं। यह रेखा (IB) धनात्मक रूप से अवनत है क्योंकि कोई भी विस्तारकारी राजकोषीय नीति आंतरिक संतुलन कायम करने हेतु यथेष्ट प्रबलता वाली किसी कठोरतर मौद्रिक नीति द्वारा संतुलित की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए बिंदु F से आरंभ करने पर, अर्थव्यवस्था को खिसकाकर बिंदु A पर ले आने वाली राजकीय–व्यय वृद्धि अत्यधिक कुल माँग और माँग–दबाव महँगाई की ओर अग्रसर करती है। इसे किसी कठोरतर मौद्रिक नीति और उच्चतर ब्याज दर द्वारा दुरुस्त किया जा सकता है, जो कि देश को IB रेखा पर खिसकाकर बिंदु A' पर ले जाएगा। दूसरी ओर, EB रेखा राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाती है जो संतुलन (यथा, देश के भुगतान शेष में संतुलन) में परिणत होते हैं। इस रेखा (EB) पर बाह्य संतुलन के किसी बिंदु से आरंभ कर, कोई भी विस्तारकारी राजकोषीय नीति राष्ट्रीय आय को प्रोत्साहित करती है जिससे देश का व्यापारांतर और बिगड़ जाता है। इसे कुछ और कड़ी मौद्रिक नीति के सहारे संतुलित किया जाता है, जिससे पूँजी अंतर्वाहों को यथेष्ट रूप से बढ़ाने (अथवा पूँजी बहिर्वाह

घटाने) हेतु देश की ब्याज दर बढ़ती है ताकि बाह्य संतुलन हासिल हो सके। उदाहरण के लिए, EB रेखा पर बिंदु F से आरंभ कर, ऐसी कोई भी विस्तारकारी राजकोषीय नीति जो देश को खिसकाकर बिंदु A की ओर लाती है, बाहरी घाटे की ओर अग्रसर करती है। इसे किसी कठोरतर मौद्रिक नीति और उच्चतर ब्याज दर द्वारा दुरुस्त किया जा सकता है, जो कि देश को EB रेखा पर खिसकाकर बिंदु A' पर ले जाएगा। केवल बिंदु F, जहाँ IB और EB रेखाएँ एक दूसरे को काटती हैं, पर ही देश सहकालिक रूप से आंतरिक एवं बाह्य संतुलन दर्शाएगा। इन IB और EB वक्रों (चित्र 12.10 में) का काटना ही आंतरिक और बाह्य असंतुलन के चार क्षेत्रों को परिभाषित करता है। आप देखेंगे कि EB रेखा IB रेखा से कहीं अधिक चौरस है। ऐसा उस स्थिति में सदैव होगा जब अल्पावधि अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाह अंतर्राष्ट्रीय ब्याज अवकलों की वजह से होंगे। इस बात को आगे निम्नवत् स्पष्ट किया जा सकता है –

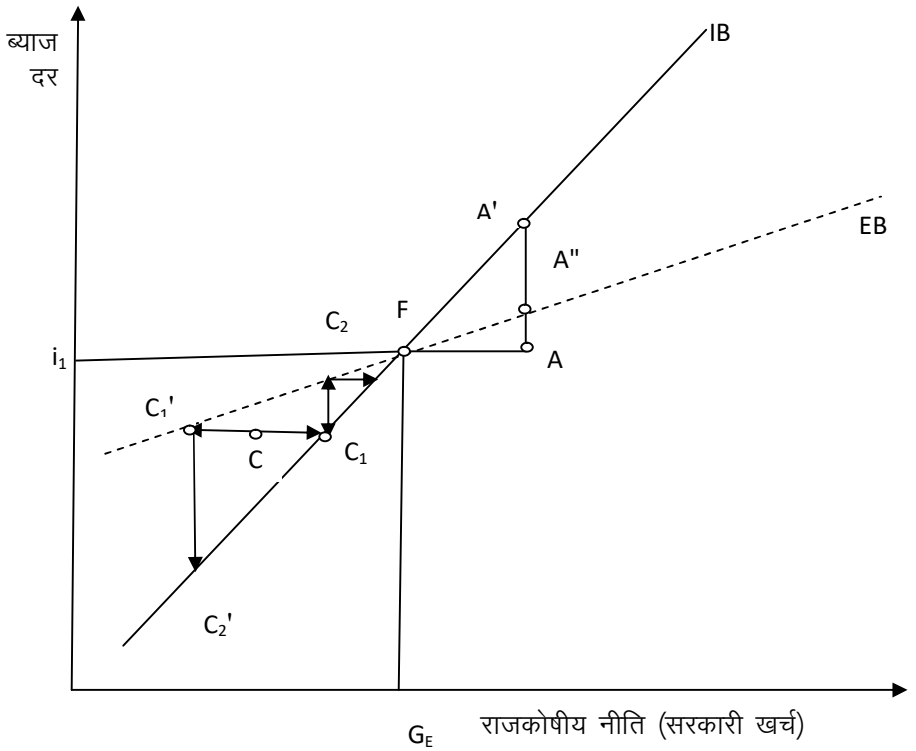

चित्र 12.10: प्रभावी बाजार वर्गीकरण और नीति मिश्रण

किसी भी देश में, विस्तारकारी राजकोषीय नीति राष्ट्रीय आय में वृद्धि कर धन की लेन–देन माँग बढ़ा देती है। यदि मुद्रा प्राधिकरण इस बढ़ी माँग को पूरा करने के लिए धनापूर्ति यथेष्ट रूप से बढ़ा देते हैं तो ब्याज दर अपरिवर्तित रहेगी। ऐसी परिस्थितियों में, राजकोषीय नीति राष्ट्रीय आय के स्तर को तो प्रभावित करती है परंतु ब्याज दर को नहीं। दूसरी ओर, मौद्रिक नीति धनापूर्ति और देश की ब्याज दर में परिवर्तन लाकर काम करती है। ब्याज दर में परिवर्तन न सिर्फ निवेश एवं राष्ट्रीय आय के स्तर को (गुणक प्रक्रिया के माध्यम से) अंतर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों को भी प्रभावित करता है। परिणामतः, बाह्य संतुलन हासिल करने में राजकोषीय नीति की अपेक्षा मौद्रिक नीति कहीं अधिक कारगर सिद्ध होती है। अतः, EB रेखा IB रेखा से कहीं अधिक चौरस होती है। प्रभावी बाजार वर्गीकरण सिद्धांत को अपनाते हुए, मौद्रिक नीति को बाह्य संतुलन लाने के लिए और राजकोषीय नीति को आंतरिक संतुलन लाने के लिए निर्दिष्ट किया जाना चाहिए। यदि देश इसके विपरीत चलता है तो वह आंतरिक एवं बाह्य संतुलन से और दूर चला जाता है। उदाहरण

के लिए, यदि बाहरी घाटा खत्म करने के लिए संकुचनकारी राजकोषीय नीति अपनाकर देश EB रेखा पर बिंदु C (चित्र 12.10 में) से, जो बेकारी और घाटा (क्षेत्र IV) दर्शाता है, बिंदु C1' की ओर खिसक जाए, और फिर IB रेखा पर बिंदु C2' की ओर खिसककर बेकारी समाप्त करने के लिए कोई सरल मौद्रिक नीति अपना ले तो अर्थव्यवस्था बिंदु F से दूर व दूरतर होती जाएगी। दूसरी ओर, यदि देश IB रेखा पर बिंदु C1 तक पहुँचने के लिए समुचित रूप से कोई विस्तारकारी राजकोषीय नीति प्रयोग करे, और फिर EB रेखा पर बिंदु C2 तक पहुँचने के लिए एक कठोरतर मौद्रिक नीति अपना ले तो देश बिंदु F के निकट व निकटतर आता जाएगा। वास्तव में, विस्तारकारी राजकोषीय और संकुचनकारी मौद्रिक नीतियों के समुचित घालमेल से कोई भी देश एक ही सोपान में बिंदु C से खिसककर बिंदु F पर आ सकता है (जैसा कि हमने चित्र 12.9 में IS –LM –BP प्रतिमान का अध्ययन कर जाना)।

बोध प्रश्न 3

1) स्वॉन रेखाचित्र में दर्शाए जाने वाले चार क्षेत्रों का महत्व समझाइए।

.....

.....

.....

.....

2) आंतरिक एवं बाह्य संतुलन संबंधी दो लक्ष्य हासिल करने के लिए दो विशिष्ट नीतियों को समरसता के साथ प्रयोग करने की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

.....

.....

.....

.....

3) कोई अर्थव्यवस्था बाहरी घाटे और बेकारी की स्थिति से आरंभ कर किसी नियत विनिमय दर के अनुसार आंतरिक एवं बाह्य दोनों संतुलन किस प्रकार हासिल कर सकती है?

.....

.....

.....

.....

12.6 सार–संक्षेप

लघु अर्थव्यवस्था की अवकल्पना में रियायत के साथ, इस इकाई में हमने इस बात पर चर्चा की कि किसी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था के संदर्भ में, अल्पावधि में उस अर्थव्यवस्था को कोई मौद्रिक संकुचन कैसे प्रभावित करता है। किसी भी बंद अर्थव्यवस्था में, यह मौद्रिक संकुचन ब्याज दर बढ़ाकर निवेश घटा देता है और फिर इससे कुल आय घट जाती है।

यह ब्याज दर अप्रभावित रहती है क्योंकि इसे वैश्विक वित्त बाजारों द्वारा तय किया जाता है। वृहद् अर्थव्यवस्था में दो स्थितियों का औसत होता है, यथा, कोई मौद्रिक संकुचन ब्याज दर बढ़ा दे और निवेश घटा दे, लेकिन कुछ हद तक ही। अनुदार कीमतों से जुड़ी अवधारणा में भी ढील देने की आवश्यकता होती है। यदि हम ऐसा करते हैं तो लचीली विनिमय दरों के तंत राजकोषीय एवं मौद्रिक दोनों नीतियाँ उत्पादन सुधारने में प्रभावी सिद्ध होती हैं। परंतु नियत विनिमय–दर प्रणाली के अनुसार मौद्रिक नीति को निष्प्रभावी माना जाता है क्योंकि केंद्रीय बैंक विनिमय दरें स्थिर रखने की अपनी वचनबद्धता के कारण स्वयं की स्वायत्तता से हाथ धो बैठता है। आंतरिक एवं बाह्य संतुलनों का अनुरक्षण प्रायः इसीलिए दो परस्पर विरोधी लक्ष्यों के रूप में सामने आता है। आंतरिक संतुलन तब देखने में आता है जब अर्थव्यवस्था मूल्य स्थिरता के साथ पूर्ण नियोजन स्तर पर होती है जबकि बाह्य संतुलन को भुगतान शेष में संतुलन की अपेक्षा होती है। किसी भी देश को इसीलिए आंतरिक संतुलन हासिल करने के लिए राजकोषीय नीति और बाह्य संतुलन हासिल करने के लिए मौद्रिक नीति का प्रयोग करना चाहिए।

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) निवल पूँजी बहिर्वाह/निवल विदेशी निवेश ब्याज दर से विलोम संबंध रखता है। ऐसा इसलिए है कि जब घरेलू ब्याज दर गिरती है तो घरेलू निवेशकों को विदेशी ऋणदान अधिक आकर्षक लगता है और विदेशी निवेशकों को उधार देना नहीं भाता।

2) यह IS वक्र को दाएँ खिसका देती है। उच्चतर ब्याज दर निवल पूँजी बहिर्वाह घटा देती है और विनिमय दर बढ़ जाती है। घरेलू माल विदेशी माल के मुकाबले अधिक महँगा हो जाता है और निवल निर्यात घट जाता है। राजकोषीय विस्तार, इसीलिए, बढ़ता ही है। दूसरे शब्दों में, यह प्रभाव बंद अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभाव से काफी हल्का होता है।

बोध प्रश्न 2

1) यह ब्याज दर में कमी, आय में वृद्धि और विनिमय दर में गिरावट में परिणत हो अपना प्रभाव छोड़ती है।

2) यह पूँजी अंतर्वाहों को प्रेरित कर बाह्य संतुलन के अधिशेष में परिणत होती है, जिससे विनिमय दर पर बढ़ने के लिए दबाव बनता है।

बोध प्रश्न 3

1) हम किसी भी वृहद् मुक्त अर्थव्यवस्था में 'आंतरिक एवं बाह्य संतुलन' कायम करने के लिए व्यय–परिवर्तनकारी और व्यय–विनिमयकारी नीतियों का संयोजन तय कर सकते हैं।

2) बाह्य घाटे और बेकारी की स्थिति में, विनिमय दर (R) और घरेलू समावेशन (D) दोनों ही बढ़ाए जाने चाहिए।

केवल R बढ़ाने से देश को या तो बाह्य संतुलन ही हासिल हो सकता है या फिर, R में किसी बड़ी वृद्धि के साथ, आंतरिक संतुलन ही। इन्हें एक साथ हासिल नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार, केवल घरेलू समावेशन ही बढ़ाकर देश आंतरिक संतुलन तो हासिल कर लेगा किंतु उसे बाहरी घाटा होता ही रहेगा। इस प्रकार,

इन दोनों लक्ष्यों को एक साथ हासिल करने के लिए उपर्युक्त दोनों नीतियों को प्रायः समरसता के साथ अपनाए जाने की आवश्यकता होती है।

3) कोई भी देश ऐसी विस्तारकारी राजकोषीय नीति अपनाकर जो IS वक्र को दाएँ खिसकाकर IS' पर ले आए, और ऐसी कठोरतर मौद्रिक नीति अपनाकर जो LM वक्र को बाएँ खिसकाकर LM' पर ले आए, बाह्य संतुलन के साथ उत्पादन का पूर्ण नियोजन स्तर हासिल कर सकता है, ताकि IS' और LM' वक्र i_2 और Y_f पर अपरिवर्तित BP वक्र को काटें।

शब्दावली

अतिमुद्रास्फीति (Hyper-inflation) : जब मुद्रास्फीति की दर बहुत ऊँची हो जाती है। अक्सर, कई देशों में यह प्रसंग देखा गया है। उदाहरणार्थ, हाल के वर्षों में, ज़िम्बाब्वे में 175 प्रतिशत प्रतिवर्ष की मुद्रास्फीति की दर दिखाई दी है।

अनैच्छिक बेरोज़गारी : ऐसी स्थिति, जहां बेरोज़गारी स्वैच्छिक नहीं है, व्यक्ति नौकरी ढूँढ़ रहा है, मगर नौकरी मिल नहीं रही है।

आर्थिक एजेंट : आर्थिक लेन–देन, जैसे, उत्पादन/आय सृजन/पूँजी निर्माण के कार्य में संलग्न समूह। आर्थिक एजेंटों का वर्गीकरण उत्पादक, गृहस्थ, पूँजी–क्षेत्र, सरकारी क्षेत्र एवं शेष विश्व के बीच किया जा सकता है।

आवासीय निवेश (Residential Investment) : नए मकानों और इमारतों के निर्माण पर किए गए निवेश को आवासीय निवेश कहा जाता है।

आंशिक रिजर्व बैंकिंग प्रणाली : ऐसी प्रणाली जिसमें बैंक, अपने मांग जमा एवं सावधि दायित्वों का निश्चित अंश, केन्द्रिय–बैंक के पास नकदी में रखना आवश्यक है।

अवस्फीति (dis-inflation) : सामान्य कीमत स्तर में निरंतर कमी का होना।

अतिलंघन (overshooting) : दो देशों के बीच वह ब्याज दर अन्तर जो सदैव दो मुद्राओं के बीच विनिमय दर में प्रत्याशित परिवर्तन के बराबर होता है।

अनावृत्त ब्याज सममूल्यता : दो देशों के बीच वह ब्याज दर अन्तर जो सदैव दो मुद्राओं के बीच विनिमय दर में प्रत्याशित परिवर्तन के बराबर होता है।

आंतरिक संतुलन : वह स्थिति जब अर्थव्यवस्था उत्पादन के अपने संभावित स्तर पर होती है, यथा, वह देश के संसाधनों का पूर्ण नियोजन कायम रखती है और घरेलू मूल्य स्तर स्थिर रहते हैं।

अवकीमतन : सरकारी आदेश से घरेलू मुद्रा की कीमत में कमी।

अपेक्षित मुद्रास्फीति : मुद्रास्फीति की अपेक्षित दर, जिसके परिणामस्वरूप आय और धन का बहुत कम पुनर्वितरण होता है।

अनोपक्षित मुद्रास्फीति : मुद्रास्फीति जो अपेक्षित नहीं होती है। यह आय और धन का बहुत पुनर्वितरण (re-distribution) करती है।

अदृश्य हाथ : एडम स्मिथ द्वारा गढ़ा गया शब्द, जिसका अर्थ था, कि सरकार को अक्सर और बहुत दृढ़ता से अर्थव्यवस्था के संचालन में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

अवमूल्यन (Devaluation) : सरकार के अदेशानुसार निश्चित विनिमय दर की व्यवस्था के अन्तर्गत विनिमय दर मे कमी करना। सरकार के अदेशानुसर एक निश्चित विनिमय दर की व्यवस्था के अन्तर्गत घरेलू मुद्रा के मूल्य मे जानबूझकर कमी करना।

आगामी या आग्रिम अनुबंध : इस अनुबंध मे खरीदार आने वाली तिथि को बेचने वाले को नकद भुगतान करता है। जब बेचने वाला वस्तु/ सेवा को खरीदार को देता हैं। प्रायः जिस मूल्य पर वस्तु या सेवा का व्यापार किया जाता है, वह अनुबंध में प्रवेश के समय तय किया जाता है। यह भविष्य के मूल्य जोखिम/अनिश्चतता से बचने के लिए अनुबंध के समय एक निश्चित मूल्य का आश्वासन दिया जाता है जिस पर निश्चित तय तिथि को वस्तु/सेवा को खरीदने एवं बेचने के लिए भुगतान किया जाता है।

ऑपशन (Option) : ऑपशन, आगामी अनुबंध के सामान है लेकिन कई प्रकार से यह आगामी अनुबंध से अलग है। वास्तव में ऑपशन एक वस्तु, मुद्रा, सूचकांक एवं वित्तिय यंत्र की निश्चित मात्रा में खदीरने एवं बेचने को बाध्य नहीं करता बल्कि बेचने व खरीदने के अधिकार देता है।

उच्च शक्ति मुद्रा (High powered money) : M_0 को मौद्रिक आधार अथवा केंद्रिय बैंक मुद्रा अथवा उच्च शक्ति प्राप्त मुद्रा नामों से जाना जाता है।

उपभोक्ता कीमत सूचकांक : उपभोक्ता कीमत सूचकांक, वस्तु और सेवाओं के एक समूह जो उपभोक्ता कीमतों में वृद्धि की दर का प्रतिनिधित्व करता है।

ऋण पत्र (बॉन्ड) : यह धारक को भविष्य में निश्चित तारीखों पर कुछ निश्चित धनराशि भुगतान करने का वादा है।

केंजीय प्रतिमान (Keynesian Model) : यह मॉडल केन्स की पुस्तक 'General Theory' में दी गई अवधारणाओं पर आधारित है। यह मानता है, कि जब तक अर्थव्यवस्था मे बेराज़गारी विद्यमान होती है, तब तक माँग स्वयं ही अपनी आपूर्ति सृजित करती है।

कीमत–जनित मुद्रास्फीति : अर्थव्यवस्था में, उत्पादन की कीमतों, में होने वाली वृद्धि से होने वाली सामान्य कीमत स्तर में निरंतर वृद्धि।

केन्जिय विचार क्षेत्र : जब LM वक्र क्षैतिज होता है और केवल सरकारी व्यय आय स्तर को बढ़ाता है।

क्रय–शक्ति समतुल्ल्यता (PPP) : इसका मंतव्य यह संदेश देना है कि विभिन्न विनिमय दरें संतुलन में होती हैं ताकि उन मुद्राओं को चलाने वाले देशों में उनकी क्रय शक्ति वही रहे।

खुली अर्थव्यवस्था : वह अर्थव्यवस्था, जो शेष विश्व में लेन–देन करती है।

खुले बाजार की प्रक्रियाएं	:	केंद्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों को जनता या बैंक से बिक्री/खरीद।
गुणक	:	वह राशि जिसके द्वारा एक इकाई द्वारा स्वायत्त खर्च बढ़ने पर संतुलन आय में बदलाव होता है।
घरेलू मुद्रा के मूल्यह्रास (Depreciation)	:	विदेशी मुद्रा के मूल्य के सन्दर्भ में घरेलू मुद्रा के मूल्य में कमी
घर्षणात्मक/ प्रतिरोधात्मक बेरोजगारी	:	कई बार नौकरी की अवधि खत्म हो जाने पर श्रमिक दूसरी नौकरी खोजते है और इस अन्तराल में श्रमिक की बेरोजगारी घर्षणात्मक या प्रतिरोधात्मक बेरोजगारी कहलाती है।
घरेलू मुद्रा में कीमत वृद्धि	:	यह विदेशी मुद्रा के संदर्भ में घरेलू मुद्रा की कीमत में वृद्धि है।
घरेलू मुद्रा में कीमत ह्रास	:	यह विदेशी मुद्रा के संदर्भ में घरेलू मुद्रा की कीमत में कमी है।
चपल मुद्रा (Hot Money)	:	जो मुद्रा, सट्टागत लाभ की तलाश में, एक देश से दूसरे देश में शीघ्रता से विचरण करती है।
चालू खाता	:	इसमें वस्तुओं सेवाओ एवं एक तरफा हस्तांतरण का शेष शामिल है। प्रायः चालू खाते का शेष शून्य नही होता, यह या तो अधिशेष मे होता है या फिर घाटे का होता है। चालू खाता अधिशेष मे होता है। यदि निर्यात अधिक है, आयात से और शुद्ध एकतरफा हस्तांतरण विदेशी प्राप्तियाँ अधिक है।
चक्रीय बेरोजगारीः	:	व्यापार चक्र के कारण कुल मांग में होने वाले उतार–चढ़ाव के कारण उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी। उदाहरणः जब कुल मांग में कमी आती है तो परिणामस्वरूप श्रम की मांग मे भी कमी आती है और बेरोजगारी बढ़ती है। दूसरी तरफ यदि (व्यापार चक्र के कारण) अर्थव्यवस्था में वृद्धि होने से कुल मांग में वृद्धि होती है तो श्रम की मांग भी बढ़ती है तो बेरोजगारी कम होती है। इस प्रकार चक्रीय बेरोजगारी प्राकृतिक रूप से चक्रीय है।
तरलता वरीयता क्षेत्र (Liquidity Preference)	:	मुद्रा की जिस भी मात्रा की आपूर्ति की जाती है, लोग उसे अपने पास रखने के लिए तत्पर हैं, जो मौद्रिक नीति को पूर्णतः अप्रभावशाली बनाता है।
तत् प्रति तत् (quid pro quo)	:	एक विनिमयकर्ता द्वारा जब कुछ प्राप्त होने के बदले में कुछ दिया जाए तो उसे तत् प्रति तत् कहतें है।

त्याग अनुपात (sacrifice ratio) : यह मुद्रास्फीति को एक प्रतिशत नीचे लाने के लिए उत्पादन के प्रतिशत नुकसान को संदर्भित करता है।

तरलता पाश (liquidity trap) : ब्याज की बहुत कम दर (लगभग शून्य) पर, लोग मुद्रा की किसी भी राशि को अपने पास ही रखना चाहते हैं, और ब्याज–देने वाली परिसंपत्तियों में दिलचस्पी नहीं रखते।

निवेश : एक वर्ष में एक अर्थव्यवस्था में पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन।

निवल घरेलू पूँजी निर्माण : एक अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में कुल पूँजीगत उत्पादन तथा स्टॉक में वृद्धि का वह भाग, जो उस अर्थव्यवस्था के कुल पूँजी स्टॉक में वृद्धि के लिए प्रयुक्त होता है।

निवेश बचत वक्र (IS Curve) : निवेश बचत वक्र, जो ब्याज दर और आय में विलोम संबंध (inverse relationship) दिखाता है ।

नकद आरक्षित अनुपात (CRR) : जिसे बैंक को अपनी बैंक जमा का प्रतिशत जो केंद्रीय बैंक के पास रखना आवश्यक है। भारत में, 2019 में CRR 4 प्रतिशत है। यदि रु 100 एक बैंक में जमा किया जाता है, बैंक को RBI के पास 4 रुपये रखने की आवश्यकता होती है। RBI इसे 3 से 15 प्रतिशत के बीच निर्धारित कर सकता है।

निवेश फलन का ढलान : ब्याजदर के लिए निवेश की संवेदनशीलता।

निश्चित विनिमय दर (Fixed Exchange Rate) : व्यवस्था वा शासन, जहां सरकार एक मुद्रा के मूल्य को किसी विशिष्ट मुद्रा या वस्तु के मूल्य को स्थिर बनाए रखने की कोशिश करती है।

नामिक विनिमय दर : किसी विदेशी मुद्रा की प्रति इकाई घरेलू मुद्रा की राशि।

निरपेक्ष PPP : इसका तात्पर्य है कि विनिमय दर सापेक्ष कीमत स्तरों के बराबर है।

निवल पूँजी बहिर्वाह : वह राशि जो घरेलू निवेशक विदेशों में उधार देते हैं घटा वह राशि जो विदेशी निवेशक अपने देश को उधार देते हैं।

नामिक विनिमय दर : विदेशी मुद्रा के संदर्भ में घरेलू मुद्रा की कीमत।

प्रति व्यक्ति जीडीपी : किसी देश के सकल घरेलू उत्पाद का, उसकी कुल जनसंख्या से अनुपात।

पारंपरिक प्रतिमान (Classical Model) : पूर्व–केंजीय अर्थशास्त्रियों की अवधारणाओं से अवकलित अर्थव्यवस्था का एक मॉडल। यह इस मान्यता पर आधारित है, कि कीमत एवं वेतन बाज़ारों के प्रति पूर्ण संवेदी होते हैं। और साथ ही, मौद्रिक नीति उत्पादन एवं रोज़गार जैसे वास्तविक चरों को प्रभावित नहीं करती।

पारम्परिक अर्थशास्त्री : ऐसे अर्थशास्त्री जो परम्परागत दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं। प्रमुख पारम्परिक अर्थशास्त्रियों में शामिल हैं – एडम स्मिथ, डेविड रिकार्डो, जे.बी.से, और ए.सी.पीगू।

पूँजीगत वस्तु	:	वह वस्तु, जो उपभोक्ता वस्तु, मध्यवर्ती वस्तु अथवा मशीनों के उत्पादन में सहयोग करती है।
परिसम्पत्ति बजट संरोध	:	किसी व्यक्ति की मुद्रा की मांग और ऋण पत्र की मांग व्यक्ति की कुल वित्तीय संपत्ति है।
पूंजी खाता	:	यह परिसंपत्तियो की खरीद एवं बिक्री जैसेकि स्टॉक, बांड, जमीन/भूमि उधार लेना एवं उधार देना विदेशियों को या विदेशियों से देश की सरकार, कंपनी या व्यक्तियों द्वारा किया गया लेन देन को रिकॉर्ड करता है तथा देश के सोने मे स्टॉक में होने वाले परिवर्तन एवं विदेशी मुद्रा के स्टॉक में होने वाले परिवर्तन को रिकॉर्ड करता है।
प्रबंधित फ्लोट (Managed Float)	:	एक विनिमय दर व्यवस्था जिसमें मौद्रिक अधिकारी विनिमय दर को प्रभावित करने का प्रयास करते है। बिना एक विशिष्ट, विनिमय पथ एंव लक्ष्य के।
पूँजी गतिशीलता	:	निवेशकगण किसी भी देश में परिसम्पत्तियाँ ख़रीदने हेतु स्वतंत्र होने की स्थिति।
पूँजी गतिशीलता	:	वह स्थिति जब निवेशक निम्न लेन–देन लागतों के साथ असीमित मात्रा में अपनी पसंद के किसी भी देश में परिसंपत्तियाँ खरीदने में सक्षम होते हैं।
फिलिप्स वक्र	:	मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच संबंध को दर्शाता है। अल्पावधि में, फिलिप्स वक्र नीचे की ओर झुका हुआ होता है, दोनों के बीच एक सम प्रत्ययन रहता है। दीर्धाकाल में फिलिप्स वक्र लंबवत होता है, जिसका अर्थ है, कि बेरोजगारी की दर को प्राकृतिक दर से नीचे नहीं लाया जा सकता है।
बजट घाटा (Budget Deficit)	:	जब सरकारी प्राप्तियाँ कम होती है, सरकारी व्यय की तुलना में!
बाह्य व्यावसायिक ऋण (External Commercial Borrowings - ECB)	:	ये वे ऋण हैं जो वाणिज्यिक शर्तों पर बाह्य वित्तीय संगठनों से एक देश के व्यावसायिक (कॉर्पोरेट) क्षेत्र के द्वारा उठाए गए हैं।
बैंक दर	:	वह दर, जिस पर केंद्रीय बैंक, वाणिज्यिक बैंकों को, मुद्रा उधार देता है।
बजट अधिशेष	:	सरकारी व्यय से सरकारी राजस्व की अधिकता।
बदला प्रणाली	:	एक स्वदेशी कैरी–फॉरवर्ड प्रणाली जिसका अविष्कार बॉम्बे स्टॉफ एक्सचेंज (BSE) द्वारा द्वितीयक बाजार में तरलता की सतत कमी को पूरा करने के लिए किया गया था। विदेशी निवेशकों की शिकायत से भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (SEBI) ने बदला प्रणाली को 1993 मे प्रतिबाधित कर दिया जो मार्च 1994 में प्रभावी हुआ।

बेरोजगारी की गैर–त्वरित मुद्रा स्फीति दर (NAIRU) : यह (**NAIRU**) बेरोजगारी की गैर–त्वरित मुद्रास्फीति दर का संक्षिप्त नाम है। यह बेरोजगारी की वह दर है जिसमें फिलिप्स वक्र दीर्घकाल में सीधा होता है। जिसे प्रायः बेरोजगारी की प्राकृतिक दर भी कहा जाता है।

ब्याज समानता की स्थिति : वह स्थिति जहां किन्हीं दो मुद्राओं की जमा पर अपेक्षित रिटर्न बराबर होती है, जब रिटर्न एक ही मुद्रा मे मापी जाती है।

बेरोजगारी की प्राकृतिक दर : यह अर्थव्यवस्था में घर्षण एवं अपूर्णताओं को मानते हुए दर्शाती है कि किसी भी समय किसी अर्थव्यवस्था मे उसकी श्रम–शक्ति का कुछ अंश का बेरोजगार होना स्वाभाविक है। जिसे बेरोजगारी की गैर त्वारित मुद्रा स्फीति दर कहा जाता है (NAIRU)।

बाह्य संतुलन : वह लब्ध स्थिति जब कोई देश न तो अत्यधिक चालू खाता घाटा सह रहा हो और न ही अधिशेष धारक हो (यथा, निवल अधिशेष शून्य के बराबर हो या फिर उसके नजदीक)।

ब्याज समता शर्त : यह एक ऐसी स्थिति है जहां किसी भी दो मुद्राओं के जमा पर अपेक्षित प्रतिप्राप्ति की समान मुद्रा में मापित दर समान होती है।

भुगतान शेष : यह एक विशेष अवधि में किसी देश और शेष विश्व के निवासयिों के बीच होने वाले सभी आर्थिक लेन देन का रिकार्ड है। ये लेन देन व्यक्तियों, फर्मों एंव सरकारी संस्थाओं द्वारा किये जाते हैं। इस प्रकार, भुगतान सन्तुलन में किसी देश के सभी बाहरी दृश्य एवं अदृश्य लेने देन शामिल होते है।

भुगतान–शेष अनुसूची : यह ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (Y) के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाती है जहाँ ज्ञात विनिमय दर पर देश का भुगतान शेष संतुलन में होता है।

मुद्रास्फीति : मुद्रास्फीति सामान्य कीमत स्तर में निरन्तर वृद्धि को कहा जाता है।

मंदी : जब व्यापार–चक्र में, आर्थिक सुस्ती अर्थात् मंदी दिखाई देती है; और आर्थिक संवृद्धि मंदी की स्थिति में ही होती है।

मौद्रिक प्रवाह : वर्गों के बीच मुद्रा का प्रवाह।

मुद्रा : यह परिसंपत्तियों का स्टॉक है, जिसका प्रयोग लेन–देन के लिए किया जाता है।

मुद्रा गुणक (Money Multiplier) : मुद्रा के स्टॉक का उच्च शक्ति मुद्रा के स्टॉक से अनुपात।

मुद्रा का परिमाण सिद्धांत : प्रतिष्ठित सिद्धांत है, जो बताता है, कि कीमत स्तर, मुद्रा की आपूर्ति का आनुपातिक होता है।

मुद्रा का चलन वेग : लेन–देन अथवा आय के वार्षिक प्रवाह का वित्तीयन करने के उद्देश्य से एक वर्ष मे मुद्रा स्टॉक, जितनी बार हाथ बदलता है।

मूलभूत मुद्रास्फीति (core inflation) : यह, मुद्रास्फीति का एक मापक है, जो उन वस्तुओं को बाहर निकाल देता है, जो कीमत उच्चावचन, (विशेष रूप से भोजन और ऊर्जा) का सामना करते हैं।

मुद्रास्फीति : सामान्य कीमत स्तर में लगातार वृद्धि।

मांग–जनित मुद्रास्फीति : अर्थव्यवस्था में, कुल मांग में, होने वाली वृद्धि से होने वाली, कीमत स्तर में निरंतर वृद्धि।

मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण (inflation targeting) : कई देशों में मौद्रिक नीति का उद्देश्य मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण है, जहां केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति की किसी दर की प्राप्त करने का लक्ष्य रखता है। उदाहरण के लिए, भारत में, भारतीय रिज़र्व बैंक 2 प्रतिशत की सहिष्णुता बैंड के साथ 4 प्रतिशत की मुद्रास्फीति दर को लक्षित करता है।

मुद्रा का परिमाण सिद्धांत : यह सिद्धांत बताता है, कि अर्थव्यवस्था में मुद्रा के परिमाण और बेचे जाने वाले सामान की कीमतों के बीच सीधा संबंध होता है।

मुद्रास्फीति के संरचनात्मक सिद्धांत (Structural Theory) : संरचनात्मक सिद्धांतों के समर्थकों का मानना था, कि देश में महंगाई संरचनात्मक विकृतियों के कारण या कारोबारी माहौंल की कुछ संस्थागत विशेषताओं के कारण उत्पन्न होती है।

मुद्रा का कीमत : मुद्रा का कीमत उसकी क्रय शक्ति है, कि वह कितनी मात्रा में वस्तुएँ और सेवाएँ खरीद सकती है। मुद्रा का कीमत, एवं कीमत स्तर मे विपरीत संबंध होता है। जब कीमत स्तर बढ़ता है, तो मुद्रा की कीमत कम हो जाती है।

महामंदी (Great Depression) : समय की वह अवधि, जब कम उत्पादन और उच्च बेरोजगारी ने विश्व की अर्थव्यवस्थाओं मे संतुलन के स्तर पर काम करना असंभव बना दिया। जो 1929 में शुरू हुआ, और 7–8 साल तक रहा।

मुद्रा अदला बदली (Swap) : विनिमय एक वित्तीय सौदे है जो प्रत्येक पार्टी को सौदे का आदान–प्रदान करने के लिए बाध्य करता है (स्वैप) भुगतान का एक समूह है जो किसी अन्य पार्टी के स्वामित्व वाले भुगतान के एक और समूह के लिए होता है।

रेपो दर (Repo Rate) : वह दर, जिस पर केंद्रीय बैंक, वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रतिभूतियों जैसे संपार्श्विक (collateral) प्रस्तुत करने पर बैंकों को मुद्राराशि उधार देता है।

रिवर्स रेपो दर : जिस दर पर वाणिज्यिक बैंक प्रतिभूतियों को खरीदकर अपनी अतिरिक्त तरलता को केंद्रीय बैंक में जमा कर सकते हैं।

रुद्ध स्फीति (Stagflation) : वह आर्थिक स्थिति, जहां आर्थिक विकास बहुत धीमा या स्थिर होता है, और साथ साथ कीमतें बढती रहती हैं।

राजकोषीय नीति : सरकार के कर और व्यय का व्यवहार।

LM वक्र : उन बिंदुओं का मिलान जो आय और ब्याज दर के विभिन्न संयोजनों पर मुद्रा बाजार के संतुलन को दर्शाता है।

लोचदार विनिमय दर (Flexible Exchange Rate) : वह विनिमय दर व्यवस्था जहां एक मुद्रा के मूल्य को, विदेशी मुद्रा बाजार मे आने वाले उतार चढ़ाव के अनुसार बदलने की अनुमति होती है।

विदेशाों से शुद्ध साधन आय : एक अर्थव्यवस्था के साधारण निवासी जो अस्थायी रूप से विदशों में रहते हैं, उनके द्वारा अर्जित साधन आय में से, उस अर्थव्यवस्था में शेष विश्व के अस्थायी निवासियों द्वारा अर्जित आय का अंतर।

व्यापार शेष (Balance of Trade) : यह केवल दृश्य मदों का निर्यात तथा आयात को संदर्भित करता है।

विस्तृत मुद्रा (Broad Money) : M_3 को विस्तृत मुद्रा कहा जाता है, चूँकि इसमें सावधि जमाओं (Time Deposites) को भी शामिल किया जाता है।

वैधानिक तरलता अनुपात (SLR) : बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियों के रूप में अपनी मांग और समय जमा का एक निश्चित प्रतिशत अपने के पास रखने की वैंधानिक बाध्यता। वर्तमान में (2019 में) भारत में SLR 19.5 प्रतिशत है।

व्यापार चक्र : एक अर्थव्यवस्था में आर्थिक गतिविधियों में समय–समय पर उतार–चढ़ाव होता रहता है। एक व्यापार चक्र के चार चरण होते हैं, अर्थात, विस्तार, मंदी, अवसाद और सुधार। विस्तार के दौरान अर्थव्यवस्था बढ़ती है जबकि मंदी के दौरान विकास की दर में गिरावट आती है। अवसाद बहुत गंभीर है, और अर्थव्यवस्था नकारात्मक आर्थिक संवृद्धि का गवाह बन सकती है। सुधार के दौरान, अर्थव्यवस्था अवसाद से उबरती है।

वस्तु बाजार संतुलन : जब AD और AS आपस में मिलते हैं।

वास्तविक मुद्रा शेष : मूल्य स्तर से विभाजित नकद मुद्रा की मात्रा।

व्युत्पाद (Derivatives) : एक व्युत्पाद एक कीमत पर एक सुरक्षा है जो एक या अधिक अंतर्निहित परिसंपत्तियों पर निर्भर है। व्युत्पाद स्वयं संपत्ति या संपत्ति के आधार पर दो या अधिक पार्टियों के बीच एक सौदे है। इसका कीमत अंतर्निहित परिसंपत्ति में उतार–चढ़ाव से निर्धारित होता है। सबसे आम अंतर्निहित परिसंपत्तियों में स्टॉक, ऋणपत्र, वस्तु, बाजार सूचकांक, मुद्राएं शामिल हैं।

विनिमय दर : दो मुद्राओं के बीच विनिमय दर वह दर है जिस पर एक मुद्रा का दूसरे के लिए विनिमय किया जाएगा। इसे किसी अन्य मुद्रा के संबंध में एक देश की मुद्रा के कीमत के रूप में भी माना जाता है।

विनमय दर व्यवस्था : वह व्यवस्था जहां एक देश अपनी मुद्रा का विदेशी मुद्रा बाजार मे प्रबंन्धन करता है।

वास्तविक विनिमय दर : विदेशी वस्तुओं के लिए घरेलू वस्तुओं के सापेक्ष कीमत

वित्त बाज़ार : किसी ऐसे पण्य क्षेत्र के वर्णनार्थ एक व्यापक पदबंध जहाँ इक्विटी, बॉण्ड, मुद्रा एवं अवकलज जैसी प्रतिभूतियों का लेन–देन किया जाता हो।

व्यापार अधिशेष : जब किसी देश की वस्तुओं एवं सेवाओं का निर्यात, आयात से अधिक होता है तो उस देश का व्यापार अधिशेष उत्पन्न होता है।

विनिमय दर मूल्यक्षय : मुद्रा का ऐसा मूल्यक्षय जो कि एक अथवा अधिक विदेशी मुद्राओं के संदर्भ में व्यक्त किसी देश की मुद्रा का ह्रास दर्शाता हो। यह विशिष्ट रूप से किसी ऐसी अस्थाई विनिमय दर प्रणाली में नजर आता है जहाँ कोई औपचारिक मुद्रा मान कायम नहीं रखा जाता।

वास्तविक विनिमय दर : विदेशी वस्तुओं के लिए घरेलू सामानों की सापेक्ष कीमत।

व्यय–परिवर्तनकारी नीतियाँ : घरेलू व्यय अथवा समावेशन एवं उत्पादन बराबर करने के उद्देश्य को लेकर आय एवं नियोजन को प्रभावित करने पर अभिलक्षित वे नीतियाँ जो राजकोषीय अथवा मौद्रिक नीतियों का रूप ले लेती हैं।

व्यय–विनिमयकारी नीतियाँ : वे समष्टि–अर्थशास्त्रीय नीतियाँ जो विदेशी एवं घरेलू माल पर किसी देश के व्यय संयोजन को प्रभावित करती हों। अधिक विशिष्ट रूप से, ये विदेशी एवं घरेलू माल पर व्यय संयोजन परिवर्तित कर किसी देश के चालू खाते को संतुलित करने हेतु नीतियाँ होती हैं।

शेष विश्व से शुद्ध हस्तांरण : एक वर्ष में शेष विश्व से, अर्थव्यवस्था में एकतरफा हस्तांतरण से उस अर्थव्यवस्था द्वारा शेष विश्व को किया गया, एकतरफा हस्तांतरण को घटाना।

शुद्ध निर्यात : एक वर्ष में निर्यातों के कुल मूल्य से आयातों के कुल मूल्य को घटाना।

शुद्ध घरेलू उत्पाद : बिना दोहरी गणना के, एक अर्थव्यवस्था के घरेलू क्षेत्र में, एक वर्ष में उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं का मूल्य, जिसमें से घिसावट को घटा दिया जाता है। यह अवधारणा घरेलू क्षेत्र की अवधारणा से संबंधित है।

शुद्ध अप्रत्यक्ष कर : अप्रत्यक्ष करों से आर्थिक सहायताओं का अंतर।

शुद्ध राष्ट्रीय प्रयोज्य आय : यह साधन आय तथा शेष विश्व से अंतरण आयों से प्राप्त एक राष्ट्र की कुल आय है। यह बाज़ार मूल्यों पर निवल राष्ट्रीय उत्पाद जमा शेष विश्व से शुद्ध चालू अंतरण के समान है।

शेष विश्व क्षेत्र : यह पूँजीगत वस्तुओं के कुल चालू उत्पादन का वह भाग है जो उत्पादन प्रक्रिया के दौरार सामान्य टूट–फूट तथा पुरानेपन के कारण पूँजीगत वस्तुओं के मूल्य में अपेक्षित कमी के कारण पूँजीगत वस्तुओं के स्टॉक को बदलने के लिए प्रयुक्त होता है।

शुद्ध घरेलू पूँजी निर्माण : यह शुद्ध घरेलू पूँजी निर्माण को बाज़ार कीमतों पर निवल घरेलू उत्पाद से भाग करते हुए 100 से गुणा करने पर प्राप्त होती है।

शुद्ध घरेलू बचत दर : यह शुद्ध घरेलू बचत को बाज़ार कीमतों पर शुद्ध घरेलू उत्पाद को भाग करते हुए 100 से गुणा करके प्राप्त होती है।

शुद्ध विदेशी पूँजी प्रवाह दर : यह सकल घरेलू पूँजी निर्माण दर और सकल घरेलू बचत के बीच का अंतर होती है।

शुद्ध निर्यात : निर्यात एवं आयात के बीच के अन्तर को शुद्ध निर्यात/व्यापार संतुलन कहते है। निर्यात यदि आयात से अधिक है तो वह देश व्यापार अधिशेष में है। यदि निर्यात से अधिक आयात है तो वह देश व्यापार घाटे में है।

स्वरोज़गार–युक्तों की मिश्रित आय : असंगठित क्षेत्र के उद्यमों द्वारा सृजित वह साधन आय, जिसमें कर्मचारियों का मुआवजा एवं व्यवसाय से प्राप्त आय, के बीच अंतर नहीं किया जा सकता।

स्वायत्त व्यय : कुल मांग (AD) का एक हिस्सा, जो आय और उत्पादन के स्तर से स्वंतत्र है।

स्वचालित स्थिरक (automatic stabiliser) : बजट में राजस्व और व्यय मदें जो अर्थव्यवस्था की स्थिति के साथ स्वचालित रूप से बदलते हैं और सकल घरेलू उत्पाद को स्थिर करते हैं।

स्वायत्त निवेश : निवेश व्यय जो आय या ब्याज दर पर निर्भर नहीं करता।

श्रम का सीमांत उत्पाद : नियोजित श्रम की एक अतिरिक्त इकाई लगाने से, उत्पादन में होने वाला परिवर्तन।

श्रम–शक्ति : कुल जनसंख्या का वह वर्ग जो काम करने का इच्छुक है। वह वर्ग या तो कार्यरत है या बेरोजगार है।

सकल घरेलू उत्पाद (GDP) : प्रायः एक वर्ष में किसी देश में, उत्पादित अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य का कुल योग। जीडीपी में माध्यमिक वस्तुएं एवं अवैध क्रियाकलापों से अर्जित आय को शामिल नहीं किया जाता। भारत समेत अधिकांश देशों में, जीडीपी का माप, वार्षिक आधार के अलावा तिमाही आधार पर भी किया जाता है।

साधन सेवाएँ : उत्पादन के साधनों – भूमि, श्रम पूँजी और उद्यमशीलता – द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएँ।

साधन लागत : उत्पादन के साधनों (जिससे अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन होता है) को उनसे ली गई सेवाओं के बदलें दी गई कुल लागत। यह वस्तुओं और सेवाओं के बाज़ार मूल्य से – शुद्ध अप्रत्यक्ष करों को घटाकर प्राप्त होती है।

समष्टि अर्थशास्त्र : अर्थशास्त्र वह एक शाखा, जो अर्थव्यवस्था में रोज़गार, मुद्रा–स्फीति, भुगतान–शेष, राष्ट्रीय आय जैसे समूहों का अध्ययन करती है।

सामान्य निवासी : वे गृहस्थ अथवा संस्थाएँ, जिनके हितों का केंद्र तो अर्थव्यवस्था में होता है, लेकिन इनमें से कुछ अस्थायी रूप से विदेशों में होते हैं।

सकल घरेलू पूँजी निर्माण दर : यह सकल घरेलू पूँजी निर्माण को बाज़ार कीमतों पर सकल घरेलू उत्पाद से भाग करते हुए 100 से गुणा करने पर प्राप्त होती है।

सकल घरेलू बचत दर : यह सकल घरेलू बचत को बाज़ार कीमतों पर सकल घरेलू उत्पाद को भाग करते हुए 100 से गुणा करके प्राप्त होती है।

संकीर्ण मुद्रा (Narrow Money) : M_1 को संकीर्ण मुद्रा नाम से भी जाना जाता है।

सकल आपूर्ति वक्र : पारम्परिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार कुल आपूर्ति वक्र ऊर्ध्वाधर (vertical) है, जिसका अर्थ है कि कुल उत्पादन हमेशा पूर्ण रोजगार स्तर पर होता है। केन्स के अनुसार यदि अर्थव्यवस्था में संसाधनों का उपयोग कम हो रहा हो तो अल्पावधि में, कुल आपूर्ति वक्र क्षैतिज (horizontal) होगा।

संतुलित बजट गुणक (balanced budget multiplier) : संतुलन आय उसी राशि से बढ़ती है, जितनी द्वारा सरकार खर्च करती हैं। यह माना जाता है, कि सरकारी खर्च में परिवर्तन करों में परिवर्तन के बराबर है। करों को स्वायत्त करों के रूप में लिया जाता है।

सापेक्षिक क्रय–शक्ति क्षमता : एक अवधि में किन्ही मुद्राओं की विनिमय दर का प्रतिशत परिवर्तन उनके राष्ट्रीय मूल्यों स्तरों में होने वाले प्रतिशत प्ररिवर्तन मे बराबर होता है।

स्पॉट रेट (spot rate) : ''मौके पर'' ट्रेडिंग करने वाली विनिमय दर को स्पॉट एक्सचेंज दर कहा जाता है एवं सौदे को स्पॉट ट्रॉजेक्शन कहा जाता है।

सरंचनात्मक बेरोजगारी : वह बेरोजगारी जो किसी अर्थव्यवस्था मे कुछ सरंचनात्मक मुद्दों के कारण पैदा होती है। अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों में श्रम की आपूर्ति एवं श्रम की मांग के बीच असंतुलन के आने से पैदा होती है। कुछ क्षेत्रों में शैक्षिक गुणवत्ता जो उद्योगों की मांग के अनुसार न होने के कारण पैदा होती है।

सापेक्ष PPP : यह बताता है कि किसी भी अवधि में दो मुद्राओं के बीच विनिमय दर में परिवर्तन राष्ट्रीय कीमत स्तरों में प्रतिशत परिवर्तन के बीच अंतर के बराबर होता है।

हस्तांतरण भुगतान (Transfer Payments) : एकतरफा मुद्रा का भुगतान हैं। जिसके बदले में कोई वस्तु एवं सेवा प्राप्त नहीं की जाती।

ह्रासकारी प्रभाव : एक ऐसी स्थिति है जहां, निजी निवेश की कीमत पर ही सार्वजनिक निवेश में वृद्धि संभव हो।

BP वक्र : यह ब्याज दरों व राष्ट्रीय आय के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाता है जहाँ देश का भुगतान–शेष किसी ज्ञात विनिमय दर पर साम्यावस्था में होता है।

EB वक्र : वह वक्र जो बाह्य संतुलन (यथा, देश के भुगतान शेष में साम्यावस्था) में परिणत होने वाली राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों के विभिन्न संयोजन दर्शाता है।

IS वक्र : यह वक्र ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (Y) के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाता है जहाँ माल बाज़ार में साम्यावस्था हासिल हो जाती हो।

IB वक्र : वह वक्र जो किसी देश में आंतरिक संतुलन (यथा, मूल्य स्थिरता के साथ पूर्ण नियोजन) में परिणत होने वाली राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों के विभिन्न संयोजन दर्शाता है।

LM वक्र : यह वक्र ब्याज दरों (i) और राष्ट्रीय आय (Y) के ऐसे विभिन्न संयोजन दर्शाता है जहाँ धन की माँग उसकी आपूर्ति के बराबर होती है, जिससे मुद्रा बाज़ार में साम्यावस्था नज़र आती है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

Abel Andrew B, Ben Bernanke, and Dean Croushore, 2017, *Macroeconomics*, Ninth Edition, Pearson Education

Blanchard, Olivier, 2020, *Macroeconomics*, Sventh Edition, Pearson Education

Dornbusch Rudiger, Stanley Fisher, and Richard Startz, 2018, *Macroeconomics*, Thirteenth Edition, McGraw Hill

D'Souza, Errol, 2009, Macroeconomics, Pearson Education

Froyen, Richard T., 2012, *Macroeconomics: Theories and Policies*, Tenth Edition, Person Education

Krugman, Paul R., Maurice Obstfeld, and Marc Melitz, 2017, International Economics, Pearson Education

Mankiw, Gregory N., and Mark P. Taylor, 2017, *Macroeconomics*, Cengage Learning India Pvt. Ltd.